

सुप्रस-साहित्य-माला

भट्ट-निबन्धावली--

[पहला भाग]

स्वर्गीय पण्डित बालकृष्ण जी भट्ट के श्रेष्ठ और सुन्दर
निबन्धों का संग्रह

सम्पादक

बेदीवस शुकल

घनञ्जय भट्ट 'सरल'



१८८१ शक

हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

छठा संस्करण १९००

मुद्र १५० न वी

नगमेण्ड कुरुनाभय प्रसाद

कृतज्ञता प्रकाश

स्वर्गीय श्रीमान् बङ्गीदा-नरैय महापद्म समाजीयम पायकबाङ्ग
ने बम्बई के सम्मेलन में स्वयं उपस्थित होकर जो पाँच सङ्गल रूपों की
सहायता सम्मेलन को प्रबल की थी उसी सहायता से सम्मेलन इस सुलभ
साहित्य-मासा के प्रकाशन का कार्य कर रहा है। इस मासा में जिन सुन्दर
और मनोरम ग्रन्थ-मुद्रणों का प्रयत्न किया जा रहा है उनकी सुरभि से समस्त
हिन्दी-संसार सुभाषित हो रहा है। इस मासा के द्वारा हिन्दी-साहित्य
की जो श्रीवृद्धि हो रही है इसका मुख्य श्रेय स्वर्गीय श्रीमान् बङ्गीदा-नरैय
को है। उनका यह हिन्दी-श्रेय भाण्ड के अग्य हिन्दी-श्रेयी श्रीमानों के लिय
अनुकरणीय है।

—साहित्य मन्त्री

प्रकाशकीय

स्वर्गीय पंडित बालकृष्ण मट्ट का हिन्दी के विमर्शाओं में विशेष स्थान है। आगे उन मन और मन में हिन्दी की जो सेवा की है ऐतिहासिक दृष्टि से समझा बड़ा महत्त्व है। मट्ट जी ने साहित्य के विभिन्न अंगों पर अपूर्व रचनाएँ की हैं। उनके निबंधों की सीतिकाता सरसता और गम्भीरता साहित्यिक दृष्टि से हिन्दी की अमूल्य निधि है। इस पुस्तक में आपके बतौर उच्च कोटि के निबंध संग्रहीत हैं। स्वर्गीय मट्ट जी हिन्दी साहित्य सम्मेलन के संस्थापक भी रहे थे। ऐसी दशा में सम्मेलन का यह कर्तव्य भी था कि यह मट्ट जी की कृतियों का प्रकाशन करे। हमें पुण आता है कि इस 'मट्ट निबंधसंग्रह' के द्वारा हिन्दी में निबंध-साहित्य की एक विशेष बनी की पूर्ति होगी। विद्याला और हिन्दी साहित्य के विद्यार्थियों का इससे विशेष उपकार होगा इसमें शक भी नहीं है।

प्रपाप
१ जनवरी १९४२

—ज्योतिप्रसाद मिश्र निमत'
साहित्य-संग्रही

निवेदन

पण्डित बामदेव्य मट्ट हिन्दी के स्वामिमात्री सेनाक से। उन्हें स्वदेश और स्व-संस्कृति का अत्यधिक प्रेम था। उनके 'हिन्दी-प्रदीप' का एक-एक पृष्ठ नहीं एक-एक पद्य हमारे इस कवन का त्रमाण है। हिन्दी-भाषी नवयुवका को अपने इस महारथी की रचनाओं को पढ़कर अपनी शान-वृद्धि करनी चाहिए।

मट्ट जी की रचनाएँ पढ़ने का सौभाग्य मुझे उतना अधिक बहते नहीं मिला था। मला हो पण्डित बामदेव्य मट्ट का कि मुझे उन्होंने उनके पढ़ने का आग्रह के रिवा और मेरी आँसे खुश मयी। इसमें प्रसिद्ध नहीं मट्ट जी हिन्दी के सेनाक ही नहीं वे उसके सभ्ये निर्माता से।

इस 'निबन्धावली' के तैयार करने में बामदेव्य जी ने काफी अधिक परिश्रम किया है। वे मट्ट जी के दीन हैं और उनके पास 'हिन्दी प्रदीप' की पूरी की पूरी कल्प है। परन्तु मुख्य बात तो यह है कि उन्होंने उसका सम्पादन भी किया है। इसी से 'मट्ट-निबन्धावली' इस सुन्दर रूप में तैयार हो सकी है। यैस तो केवल इसका मुद्रण भर पड़ा है का फिर किसी-किसी निबन्ध का अंश निकाल दिया है ता वहीं-वहीं छापे की भूल समझ कर उसे सुधार देने की दिशाई भी है। परन्तु यह अपराध भी मैंने बहुत संभव कर इसलिये किया है कि मट्ट जी की 'मौलिकता' अक्षुण्ण रहे—उनकी वस्तुओं की त्यो रहे।

इन निबन्धों को पढ़कर हिन्दी के पाठक जान सकेंगे मट्टजी कितने ऊँचे पाये के मुसेलक से और आज हिन्दी के इन अक्षुण्ण-जास में भी वे अपने विनया सीप सकते हैं। हमें बिरबास है इस निबन्धावली का हिन्दी के साहित्यिक इनके अनुकरण ही आदर करते।

इन्डियन प्रेस प्रयाग

१६ नवम्बर, १९४१

—देवीदत्त शुक्ल

प्राचीन कवियों और ग्रन्थकारों के जीवन-परिचय की मद्द्मादक बातों की-
 संहिता बीठा और सप्तशती की आलोचनाएँ तथा पद्मसंन-संग्रह का भाषा
 नुसार आदि सब विषयों पर उन्होंने हिन्दी की अपूर्व सेवा की। कविता
 सम्बन्धी अथवा धृष्ट अपूर्ण विद्या अपूर्ण विद्येयण अनीली उपमा
 नयी गरल बगवता क नये अर्थ संस्कृत की अनीली उक्तियाँ संस्कृत की
 कीर्तिकादि इत्यादि रचनाएँ ही अनुपम और उपयोगी विषय मिल-मिल
 कर उन्हीं 'हिन्दी-शरीर' में छापे। नाटक अपूर्ण प्रहसन आदि की
 तो उगमें अगमर रत्न कटती। प्राचीन देव नगर, नवी पर्यटों आदि का
 छात्र-गुण अक्षय्य बचन की 'हिन्दी-शरीर' में किया गया। 'नुपति अरितावली'
 नामक लेख-मासा में इन देव की छोटी-बड़ी सभी रियासतों का हाल भी
 पूर्ण छपा। हंसी-रिप्लबी काज की बाने भी उसमें न जाने कितनी
 छपी रहीं। मतसब यह कि 'हिन्दी-शरीर' अपने समय का एक खेप्ट
 कायोनी मामिक पत्र था।

इस पत्र के अधिकांश लेख स्वयं अट्ट जी के लिखे हुये थे। परन्तु
 उन्हें उक्त समय के अग्रगण्य सभ्य प्रसिद्ध लेखकों का भी सहयोग प्राप्त था
 जिसके नाम कुछ के नाम ये हैं—प० रामाचरण गान्धारी प० श्रीपर पाठक
 प० महावीरप्रसाद द्विवेदी श्री रामाचरण मोरुण जी काज मूर्धन्युमार बर्मा
 प० मधुसूदन मिश्र प० हरिमदन मिश्र प० हाकिमप्रसाद अनुचरी बाबू
 पुष्पाक्षरकाज टण्डन प० सार्नीपर बाबूबाबी बाबू लक्ष्मण बर्मा श्री
 बलराम जानकीराम दुब प० अनन्तराम पाण्डे कविचर माधव लखन
 इत्यादि।

अट्ट जी के 'हिन्दी-शरीर' में प्रकाशित लेखों की संख्याअथवा भी अथ
 नर अथ वचन-विषयका प हीनी रहनी थी। 'श्री बेंगलूर-गमाचार'
 'हिन्दी बदबानी' 'महाभाष्य' इत्यादि तथा में अनी-अनी इनके विषय
 में बहुत-सी लिखी गयीं। अट्ट जी के भी उनका गम्भीर उदार रिया और
 उनकी सब करनी गरी कटिनी थी।

अट्ट जी अनेक विचारों और आदि-कथों का उल्लेख करते हुए

३२ वर्ष तक जिस निर्भीकता के साथ 'हिन्दी-प्रदीप' निकालते रहे, यह हिन्दी पत्रों के इतिहास में सदा चिरस्मरणीय रहेगा। आजकल के हिन्दी सम्पादकों के लिए उस समय के हिन्दी सम्पादकों की कठिनाइयों का अनुमान कर चुकना भी असम्भव है। 'हिन्दी-प्रदीप' के मुख्य प्राहकों की संख्या कभी दो सौ से अधिक नहीं हुई। मट्ट जी बराबर पटा उठते रहे पर उन्होंने पत्र बन्द नहीं होने दिया। वे कायस्थ-पाठ्यामा आश्रम में सस्कृत के अध्यापक थे। जो कुछ वेतन मिलता था वह पूरा का पूरा हर महीने सीपे प्रेस का बिल चुकाने में चला जाता था और कभी-कभी तो महीने के प्रारम्भ में ही अपनी सारी तमन्नाह प्रेसबानों को ही देकर कुछ हाथ बट जाने थे। पाठकों को यह सुनकर आश्चर्य होता कि उन्होंने ३२ वर्ष तक पत्र का सम्पादन किया किन्तु जीवन भर में शायद ही कभी कारे का मजदूर नितना होगा। वे अपने तमाम लेख इतिहास की कापियों की दुसरी ओर की कोरे अंश पर अथवा समाचार-पत्रों के रैपटों पर लिखा करते थे। उनका सारा जीवन ही सधमी और सरसगती की परस्पर प्रतिस्पर्धा का एक जीवित उदाहरण था।

मट्ट जी किसी भी तरह बुद्धि में पैदा हुए हों यह बात न थी। उनके पिता और माई व्यापार करते थे। सहर में वायसय भी थी। पर उनको पिता और माई के बन की स्वप्न में भी चाह न थी।

बहुता न होया कि मट्ट जी दिन-दिन आर्थिक सङ्कटों को उठाने हुए हिन्दी की आरंभिक प्रगति के कारण सपत्तार ३२ वर्ष तक 'हिन्दी-प्रदीप' निकालने चले गये। अन्त में संवत् १९१७ अर्थात् सन् १९१० ई० में उनके एक भेल पर सरकार ने पत्र से अज्ञात माफी। यही नहीं एक समाज नभाषित्व करने पर उन्हें अपनी मौकरी से श्री हाथ धोना पड़ा। ऐसी समा में उन्हें अपना प्रिय पत्र 'हिन्दी-प्रदीप' बन्द कर देना पड़ा। इसके उपरान्त बामानोहर से निकलने वाले 'सम्राट्' नामक साप्ताहिक पत्र था सद्गुरु बुद्धि बिल सम्पादन दिया। इस समय से 'कर्मयोगी' 'मर्यादा' 'सम्राट्' इत्यादि पत्र-पत्रिकाओं में भी गलत लिखने लगे। फिर

बाबू स्वामिन्दरदास के बुझाने पर 'सभा' को छोड़कर वे काशी में प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित 'हिन्दी-शाब्दसागर' नामक ग्रन्थ के सम्पादन के लिये बनारस चले गये और उस पूर्व उपयोगी बनान में वर्षान्त परिश्रम किया। वि.सं. १९१३ ई० में वे प्रयाग लौट आये वहीं साधन गुप्त १३ जनवरी १४ सितम्बर १९१४ को उनका वाम हो गया।

मार्तण्ड जी के बाद हिन्दी-शोध में मट्ट जी का मुक्त कथा व कदाचित् कोई व्यक्तित्व न होगी। उनका सम्पर्क उस समय के प्राय बड़े-बड़े हिन्दी-साहित्यकारों से था। पं० प्रतापनारायण मिश्र पं० जयचमरदास बाबू बालमुकुन्द मुस्त पं० गोविन्दनारायण मिश्र गिरधर मिश्र पं० भीष्मदास पं० बिनोदीशरण मोहनदास पं० श्रीप्रसाद द्विवेदी पं० मदनमोहन मालवीय बाबू पंगलाप्रसाद मुस्त से उनका अधिक परिचय और विनोद सम्बन्ध था।

मट्ट जी सेवशी सेठक थे। भाषा पर उनका असाधारण ज्ञान था। उनके विर्गों की भाषा विषय के अनुसार होती थी। यदि वे या श्रोत लिखते थे तो भाषा भी वही ही हास्यमयी रगीमी और रानी थी। यदि विर्गों पर कटाव करने से तो भाषा भी व्यंग्यपूर्ण थी। शृंगार-रस लिखते थे तो भाषा भी मोरक और लीन्दर्प से पूर्ण थी और यदि विर्गों कापीर विषय पर लिखते थे तो भाषा भी उत्तम कापीर रानी थी। परन्तु उनके सभी प्रकार के लेख कलाविशेषों की संज्ञक होते थे। यह उनके लेखों की एक विशेषता थी।

मट्ट जी के अठारक ४ वर्ष प्रकाशित हो चुके हैं। उनकी पहली 'मूल ब्रह्मचारी' मत् १८७७ ई० के लगभग प्रकाशित हुई थी। अनुत्तम सम्पादन है जो 'हिन्दी-शरीर' से उद्धृत कर पुस्तकालय में हुआ था। बड़े ही समय में इन पुस्तक के कई संस्करण हुए और अन्त में उनका दर्पणित आकर किया। इनके कुछ समय बाद की दूसरी पुस्तक 'विद्या-दास' 'हिन्दी शरीर' से उद्धृत कर प्र

हुई। यह एक प्रबन्ध है इसका भी वही नाम हुआ और पुस्तक हाथ
 हाथ निकल गयी। तीसरी पुस्तक 'सी अनाम और एक सुजान' नाम
 एक प्रबन्ध 'हिन्दी-भरीप' से लेकर प्रकाशित हुई। यह पुस्तक हिन्दी
 साहित्य सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा में पाठ्य पुस्तक नियत की गयी। इसके
 बाद बनारस हिन्दू युनिवर्सिटी ने भी इसे अपने यहाँ की एडमिशन परीक्षा
 में कोर्स-बुक नियत किया। फिर यू० पी० की टेस्ट-बुक कमेटी ने उसे
 एंग्लो वर्नाक्युलर स्कूलों में माठवें दरजे के लिये सप्लीमेन्टरी रीडर स्वीकार
 किया। मद्रास की चौथी पुस्तक 'साहित्य-सुमन' नाम से प्रकाशित
 हुई। यह मद्रास की 'हिन्दी-भरीप' में लिखे गये चुटीले रसीले २५ लेखों
 का सुन्दर संग्रह है। इसके भी अब तक कई संस्करण हो चुके हैं और यह
 भी शुरू से ही सम्मेलन की परीक्षाओं में पाठ्य-पुस्तक रखी गयी है। यू०
 पी० गवर्नमेन्ट की टेस्ट-बुक-कमेटी ने इसे भी स्वीकार किया है, और
 हिन्दी कोविद की परीक्षा में यह पाठ्य-पुस्तक भी नियत है।

अब यह पाँचवीं पुस्तक 'मद्रास-निबन्धावली' के नाम से हिन्दी प्रशियों
 के सम्मुख उपस्थित की जाती है। इसमें मद्रास के ३२ मासालिक निबन्ध
 संग्रह किये गये हैं। ये सभी लेख 'हिन्दी-भरीप' से लिये गये हैं। प्रत्येक लेख
 के नीचे उसकी रचना का समय भी दे दिया गया है।

मद्रास की जो अब तक चार पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं, हिन्दी
 संसार में उनका यथोचित सम्मान हुआ है। वे जितनी लोकप्रिय सिद्ध
 हुईं और उनके अतिने अधिक संस्करण हुए उतने शायद बहुत कम दूसरी
 पुस्तकों के हुए होंगे। जाधा है हिन्दी-संसार इस नूतन संग्रह का भी उची
 प्रकार स्वागत करेगा।

अधियापुर, इलाहाबाद
 १९ दिसम्बर, १९४१

—धनञ्जय भट्ट 'सरस'

दूसरे संस्करण का बक्तव्य

'भट्ट-निबन्धावली' का यह संप्रहू यैने पश्चित् उपीतिप्रदाय भिन्न 'निर्मल' की प्रेरणा से तैयार किया का बीर उन्हीं की दृषा से यह सम्मेलन द्वारा प्रकाशित भी हुआ । उन्हीं के प्रयत्न से कुछ ही दिन बाद इसका दूसरा भाग भी सम्मेलन से छाग । इस निबन्धावली का हिन्दी संसार में यन्त्रोचित सम्मान हुआ है । हिन्दी साहित्य सम्मेलन की उत्तमा प्रयाग विश्वविद्यालय की ११० ए० आदि कई परीक्षाओं में यह पाठ्य पुस्तक भी स्वीकृत ही चुकी है । इसके उत्तरोत्तर बढ़ते हुए माग को देखकर भट्टजी के कुछ अन्य निबन्धों को बापी भागरी प्रचारिणी लत्रा ने भी मेरे सम्पादनरत में अपने यहाँ "भट्ट-निबन्धमाला" के नाम से प्रकाशित किया है ।

हय पाठकों के सुकृग इनके "हिन्दी भाषा बीर साहित्य" सम्बन्धी निबन्धों का संप्रहू भी धीम ही प्रकृत करने ।

अद्विबागुर, प्रयाग
४ मई, १९४८

—धनञ्जय भट्ट 'सरस'

निबन्ध-सूची

१—परम्परा	१
२—कालचक्र का चक्कर	४
३—संघार कभी एक था न रहा	९
४—ईश्वर भी क्या ही ठठोल है।	१३
५—दिसबहुसाय के जुड़े-जुड़े तपके	१६
६—उपदेशों की असम-अलग बातची	२०
७—विरवास	२५
८—दर्क और विरवास	३०
९—जीवत	३३
१०—बबान	३६
११—उपमा	४२
१२—रुचि	४९
१३—सौ लयी रहे	५८
१४—नाम में नई कल्पना	६२
१५—बड़ों के बड़े हीसिले	६५
१६—दोल के भीतर दोस	७०
१७—कर्मामृत तथा कर्मकटु	७३
१८—प्रकृति के अनुसार जीवन-भरण	७६
१९—बड़ती उमर	८१
२०—वीर्यामि	८६
२१—विद्यात-भाटिका	९२
२२—मैसा-टेसा	९६
२३—रस का अनुमा	९९

- २४—रक्त में प्रीकापन कब आता है ?
२५—परिपक्व बुद्धि या पक्का आदमी
२६—एकान्त-ज्ञान
२७—जबत्-सबाह
२८—मये तरह का पनून
२९—लोक-एवमा
३०—अपुप
३१—परिचितानुदेव
३२—घटका

भट्ट-निबन्धावली

१—परम्परा

परम्परा गतानुगतिक मेड़ियाबसान भाषि कई एक मुहाविरे इसके सम्बन्ध में प्रयास किये जाते हैं। अब सोचना चाहिये यह परम्परा है क्या बसा ? यह किनी धृति का एक टुकड़ा है ? आप्तवाक्य है ? आपन्नम् है ? धर्मशास्त्र मा स्मृतिकारो की स्मृति का सिद्धान्त है ? नहीं यह पाबन् धृति-स्मृति धर्मधाम्ब धम्बधिविष्णुहारीत भाषि बठारहों स्मृतिकारों के दिमाग की बटनी या एसम्प है। केवल इतना ही नहीं बरन् बाबा वाक्य 'प्रमाणम्' का निबोड़ है। यद्यपि मुई लोक विद्वयं महाबाणप के चरितार्थ होने की प्रयासी है जिसकी धम से बसपरम्परागत अनुवृत्ति के बाये महामुनि पाषिनि के मूर्खों की अनुवृत्ति भक मारती है जिसके उद्वेग वासन के भागे बड़े-मे-बड़े सरकारी कानून ओ नियम बनना करते हैं टहरने की हिम्मत नहीं कर सकन।

इस परम्परा की अनुवृत्ति को जैसा हमन अपनी सड़कई में देला जान ९० वर्ष के उपरान्त भी वैसा ही पाते हे अब मात्र भी किसी तरह का हेर-फेर उसमें न हुआ। देश की स्थिति में किनी उमट-बसट हो गई जितने पराने राब से रंक और रंक से राब हो गये किन्तु इस परम्परा के म्याविश्व में बरा पकं न जाया और बब मे हमना प्राणुर्भाव है इसका पत्रा न लया। हम क्या हमारे प्रपितामह के प्रपितामह की दक्षिण के बाहर है। हिन्दुस्तान ऐसे गिरे देश का लो कहना ही क्या है ! कौन-सी ऐसी स्वर्ग-सदृश भूमि है कौन ऐसी सम्प्राप्तिसम्प जाति है जहां इस परम्परा पिगाबी की प्रतिष्ठा और बीरव नहीं है बड़े-बड़े नामी देश हिन्दी संसो एक और रिफार्मर सिर बुना बिये इसके पीछे पड़ मर गये तप बने पर

२—कालचक्र का घड़कर

सब है "अपना चेता हीन मति प्रभु चेता तत्काल"—

अहम्यहनि मृतानि मच्छन्ति यममखिरम्।
 धया औदितुमिच्छन्ति किञ्चाभयमतः परम् ॥”

बराबर देग रहे है आज यह पये कम उनही बारी भाभी परसों उग्रीं चिता पर मुसा आये । पर जो बचे हुये है उम्होने यही मन में ठान रगा है कि हम अजर अमर और अविनाशी हु मदा स्थायी रहेंगे । यह तो बभी उनके समुपिन अंचल चित्त में पैमता ही गरी कि एक दिन आवेगा कि हम भी राव-रग में लेकी ही चिता पर मुसाये जायेंगे । न जानिये हजार साग या करोड़ बर्य की मोह गाटे हुबे त्रिचिन्म बैठे है । तिसमन्वेह इनसे बरकर अचर्य की बात और क्या होगी ? हमारे मन में भागा है कि एसा ही के मिंग बर्न बर्न मे प्लेग मनुष्य के जीवन को पानी का बुसा-सा बनना भागो पैग बनी है रगा है । पर काटे की कोर्न बर्न और क्यों चेनी ? किसी बात की बभी गरी रगवा म गवागच राजागा भरा है २४ घंटे के दिन रात में ३६ अंतिन की उमम और हीगल मन में उठने पडते है । सब है—

“दिलचदि रजनी लार्ब प्रातः सिधिरवसान्ती बुनरायणः।
 बाल औदति मच्छन्धापातवदि न अंवावाशावायः॥”

बार भाइवा के बीच में एक मइवा है बाग मा चाचा लाऊ, बाबा भागा बडे लाल लब दिन-राग बीट जोरन रहने है और अरने रिय पुत्र की भावनी मूरत पर बार-बार पानी पी रहे है अंतितियों तिन निमने बीतता है सब पर समय आरे कि हम अगल ललम वा ध्याह बरें । बहु बार लार्ब बग्नेनी हार बीट दिगार्ब में अंगर उछवा बीट-आ मुरदा देख

अपना भी बुझाये। हमारे सब मनोरथ एकल हों बड़ी-से-बड़ी महकिल साज-साज भाँति की मिठाई परसें चार भाई विरादरी का बूटन पड़े हमारा घर पवित्र हो। यहाँ के पहिले से नगर की प्रसिद्ध मारवनिताओं को बजागा दे बिना मना, म्वाह की ठीकारियाँ हो रही थी कि अचानक सतन को स्वर आया, बधा-दाह कार-जूक टोना-टनमम में सेकड़ों रुपये पूँक बागा। चर भी फुरसत न हुई, गिलटी प्रमट हो बारी, वो ही तीन दिन में सतन जी जहाँ के थे गरी चल बसे।

बड़ी-से-बड़ी दिवली हाथिल क्रिये हुये हैं, ज्ञान-मण्डली में जिनकी कुशाघ बुद्धि की सोहरत है, बड़ी-बड़ी जमानें मन में मरी हुई हैं कि कसी दीघन में हन बिसाइतबात्ता को अपने नीचे करेन। मत्सुमुमि के सिये हम ऐसी कोई बात कर मुखरे जिसमें भारत के सत्पुत्र कहसारे बाहार बिहार की बड़बड़ी से एक दिन दो-चार हस्त मोर के हुई। दोस्तों ने समझा अजीर्ण हैं दीड़-भूप करने लये इपर इनका हान बिनइता ही मया, १२ पंटे के भीतर ही समाप्त हो बने। यह किसी ने न समझा कि अंतक देव ने एक बड़ा नाटी बालेज सोल रसबा है सर्वविद्या पारंपरत इनको वहाँ का प्रोफेसर किया चाहते हैं। यह म्याम है या म्म्याम इसका बिचार कभी मन में न आया, अचान से जवम काम करने में कबी हिकक न हुई, कई साक और करोड़ की माया जोड़ने में बचकर महा वर्ष पिघाच रह जाये फिर भी दिन रात सोचा करते हैं, ५० हजार पमाने मसामी के बाकी हैं, एक लाख मनुक सेठ के नीचे बका है और बहु टाट पसटने पर है। २५ हजार म्याम का बिब मजल मोचनरास से अब तक न बभूल हुआ। ऐसी ही ऐसी बिता में ध्यय एक रात को नीच न बारी, अधिक पीत के कारण फलित न आ दूय, जवान बन्द डा गई। मुँह टड़ा पड़ गया मुकह होठे-होठे चल बसे। साथ अपने एक पारि भी न ले गये। एक-एक बीसे के घिय जेर-बार दें। चीज का मोचन बड़ी बठिनाई ने चलता है। बीब-अपोष से एक ऐसा मायबालू कुन-उजापर पगला कि उनसे मुक्त की प्रतिष्ठा चौगुनी कर दी। मिट्टी पूँगे सोना होने लपा बरछाती नदी की बाढ़ के समान पन-सर्पति सब मोर से आ इकट्ठी

होने लगी बीजत की बाइ के ताप-माच हीसिमे और उर्मय भी बड़ने लये, संबीम पवना मकान छोड़ दिवा गया पडाऊ टोस बहने पिठने लये लयीबारी की भी लगीद होने लगी बान-बान में लफ्फसठ और बजेबारी की लठप गराय पत्ने बजे तक पहुँची। लकस्मान् बहु पुण्य एत जितकी बधोलत पह सब कृत्त वा बग बसा। मुर्यागत होने पर अल्पकार-सा एा गया जिनके मित्राज नुमुबबीलान की जेबाई तब बह गये वे अब कीही के तीन-तीन ही गये। इस तरह इस बालकच की अद्भुत महिमा मुरी भई मरी डरकाई की भाँति कुछ समय में गही जाती।

अब दुमरी और कैगिण कुछ बरिस नहीं बाम करली बयो इय काल बच वा बरकर मेवा देहा-मेवा है। कृत-अम्बक्या के सम्बन्ध में पुराब वालों की पुरानी बरिस बाते जो बाम बँटी हा हमें तो कुछ ऐसा ही बँचना है कि यह कृत-अम्बक्या भी इसी बालकच की बिकराल मति है। यहाँ और अब इस बच वा बचन बनने समबन्ध है मरी और तब गतपुण है उसका प्रतिपुन होना ही बनिबुन है। भाग्य पर बह बरकर तितान्य प्रतिबन्ध है इतिमिय यहाँ और बनिपुन बर्न रहा है। बिन्यायन पर अनु बन्ध है यहाँ मृत्यु गाययन गत्र बरना है यहाँ बानों में जो बुरादयी हैं वे भी बन्दाई में गतिमि बर सी गई है। इसी बालकच की प्रतिपुनता से हमारे में बकी-गकी यो दो एक बन्दाई की बह भी बरान और बान समय ली गई। बालकच की अम्बक्या तथा प्रतिपुनता वा हमने बडबन दुमरा उदाहरण और बया होदा कि आदि में यो बनी गीराली बरने के बहाने बाये के अब बराल भाग्य के बरमीर से बग्याबुबाठी तब अगंठ लकबचा बुरबी के गाय के बरिबारी हो लये। यही यहाँ बाते जिनको अर्थात्त्राल में यहाँ की भूमि से बानबागम्य रहा और जिनके मग-मग में यहाँ के बलबाय वा अगत्र बरना हुआ है वे बालकच की प्रतिपुनता से बिन्याय बाहर बर दिये लये हैं-बैड मलकने और बँट ताबने रग जाये है। यो कुछ मार बराने और रग है इसका आत्मन् एक लीमरा घोस रहा है। सं बरह और अलिण्ट

। अगला बँट बाय मेल वा बरक लीभाप्य बाज रहे ये लो पुनये भी

उस चक्र की बहू कुटिल गति ने ऐसा चलन बना रखा है कि बिरकाम से दुर्मिन्न और अक्षय्य इन्हें निश्चित नहीं रहने देता। इस समय कई और उपद्रवों से कुछ स्वास्थ्य या तो जैसे अपनी बहादुरी प्रकट कर रहा है। इससे किसी तरह गला घुट्टया तो कोई दूमरी बना या घेरैगी।

बड़े-बड़े शारीरिक वैज्ञानिक योगी तथा भविष्य के जाननेवाले किसी ने इनका घेब न पाया कि क्यों ऐसा होगा है। कई कहते हैं, यह ईश्वर की इच्छा है। दूसरे मानते हैं नहीं। सस्कार का पूर्व-संचित का यह परिणाम है— "जो बस कर सो तत् छन चाखा" और सोय सिद्ध करते हैं, यह मित्राणों की बरबिद्य है। संशोभक और रिफ़ामर जुदा ही तान कर रहे हैं कि हम अपने यहाँ प्रचलित कुतियों को उठाय समाज का संशोभन क्यों न कर डालें जिसमें हमारे में कौमियत और एकता भावे मूसकी बीग वधा हो कामचक्र की जा बह्यति है शत्रु गति हो जाय। कोई कहन है यह बाल-विषबाओं की भाह है। दूसरे कहते हैं यह बाल्य-विबाह का सब बीव है इत्यादि-इत्यादि। हमारे पून विरोधनि इसी पर जोर दे रहे हैं कि बाह्यों का मान और हिन्दू-धर्म पर विरबास उठता जाना है उसी का यह जन है। कोई-कोई रबी जबान हिम्मत बाव नहीं तो जानते हैं कि यह सब राजा क पाए या पुष्य का परिणाम है। जोहो बाल्य में यह क्या गोरख बना है कुछ नहीं सुनता।

नच पूछो तो आरमी की दंगानी बकिन एक हारी है तो इसी बात में कि यह कुछ हम नहीं कर सक्ती कि आज क्या है जन क्या होना और एमी को इस संसार का बड़ा ईर्ष्यानिपर अपने हाथ में रखते हुय है। यह इन कामचक्र के चक्र ही का प्रभाव है कि रोम इन्द्रप्रसव अजोप्या पाटमिपुत्र बपीर भादि बड़ी-बड़ी राजधानियाँ जा किनी समय आर मिनों का जंवल भी जिनकी सम्बाई-बोड़ाई योजन और कोनों के हिमाव नि की और जहाँ की मनुष्य-संख्या ४० लाख २० लाख १० लाख की गिनती की भी यह इन समय बहुधा तो उबाह पुष्पुर्गी के घोसलों के लिये उरनुजन है। कोई-कोई नाम मात्र को बह ठक विद्यमान है। मन्दन वेदिन बन

होने लगी दीसत की बाइ के सान-नाप हीसिने और उमंग भी बढ़ने सवे संगीन पक्का मकान छोड़ दिया गया जहाँऊ ठोस गहनेपिटने लगे जमीन की भी खरीद होने लगी बात-बात में लफासत और बजेबारी की तरा करारा पस्ने दजे तक पहुँची । अबस्मात् बहु पुण्य-रत्न तिसकी बशीसत । सब कुछ था बल बसा । मूर्यान्त होने पर मन्थकार-सा छा गया त्रि-मिबाब भृगुबमीनार की जैबाई तक चड गये ये अब कीडी के तीन-त हो गये । इस तरह इस कालचक्र की मञ्जुत महिमा 'भूरी भरी भरी डरका की भाँति कुछ समय में यहीं जाती ।

अब दूसरी ओर देखिए कुछ अकिल नहीं काम करती क्यों इत का चक्र का चक्कर ऐसा टेबा-मेडा है । युग-व्यवस्था के सम्बन्ध में पुराण वालों की पुरानी अकिल चारे जो मान बैठी हा हूँ तो कुछ ऐसा ही खँबता है कि यह युग-व्यवस्था भी इसी कालचक्र की विकराल गति है । जहाँ और जब इस चक्र का चक्कर अपने अनुकूल है वहाँ और तब सतयुग है उसका प्रतिबूत होना ही कल्पियुग है । भारत पर यह चक्कर तितान्त प्रतिबूत है इसलिये यहाँ ओर कल्पियुग बर्त रहा है ! विनायक पर अनु-बल है यहाँ मुड़ सतयुग राज करता है यहाँ वालों में जो बुधाइयाँ हैं वे भी बसाई में दामिस कर ली बई है । सही कालचक्र की प्रतिबूतता से हमारे में बची-बुची जो जो एक भसाई की बह भी बुचाई और पाप समय भी गई ।

कालचक्र की मञ्जुलता तथा प्रतिबूतता का इससे बहकर दुगटा उपाहरण और क्या होमा कि आदि में जो यहाँ सीवापरी करने के बहाने जाये वे अब समस्त भारत के करमीर से जग्याकुमारी तक असंख एकचक्रा पृथ्वी के गम्भ के अविवादी हो गये । यही यहाँ बाने त्रिनको अनादिनाल से यहाँ की भूमि से मालबागम्य रहा और त्रिनके नस-नस में यहाँ के बलबापु का अतर चूमा हुआ है वे कालचक्र की प्रतिबूतता से निनाल बाहर कर दिये गये बैठे-बैठे मनचाठे और मूँह ताबठे रह जाते हैं जो कुछ सार पदाने और एन है बलना आनन्द एक तीसरा भोग रहा है वे कुरक और उच्छिष्ट ही से अपना बेट पास लेने को परम सीमाय मान रहे वे सो उसमें भी

सब चक्र की चक्र कुटिल मति में ऐसा जलजल डाल रक्खा है कि बिरकाम से धुंधिल और अवर्षण इन्हें निदिबन्ध नहीं रहने देता। इस समय कई और उपद्रवों से कुछ स्वास्थ्य का तो प्लेग अपनी बहादुरी प्रकट कर रहा है। इससे किसी तरह गला कूटैया तो कोई बूझती बना जा बेरेवी।

बड़-बड़े वार्षिक वैज्ञानिक बोनी तथा भविष्य के जाननेवाले किसी ने इनका धेड़ न पाया कि क्यों ऐसा होता है। कोई कहते हैं यह ईश्वर की इच्छा है दूसरे मानते हैं नहीं संस्कार का पूर्व-संभित का यह परिणाम है— “जो बस करे तो सब फल चाखा” और भोग सिद्ध करते हैं, यह सितारों की परबिछ है। सधोबक और रिछर्मर जुदा ही तात भर रहे हैं कि हम अपने पहा प्रचलित कुरीतों को उठव्य समाज का संघोपन क्यों न कर डालें जिसमें हमारे में कौमियत और एकता आने मुमकी जोष वैदा हो कालचक्र की जो बक्रमति है आजु गति हो जाय। कोई कहते हैं यह बाल-विधवाओं की आह है दूसरे कहते हैं यह बाल्य-विवाह का सब दोष है इत्यादि-इत्यादि। हमारे बुरे सिरोमबि इसी पर जोर दे रहे हैं कि बाह्यों का मान और द्विभू-बर्न पर बिरवास उठता जाना है उसी का यह फल है। कोई-कोई बड़ी प्रबाल द्विम्भत बाँध नहीं तो मानते हैं कि यह सब राजा के पाप का पुण्य का परिणाम है। जो हो बास्तव में यह क्या पोरण बान्धा है कुछ नहीं पतता।

सब पुछो तो आन्धी की पैतानी बचिस एक जापी है तो इसी बात में कि यह कुछ इन नहीं कर तावती कि आज क्या है कस क्या होया और इसी को इस संसार का बड़ा इंजीनियर अपने हाथ में रक्ये हुए है। यह हम कालचक्र के चक्कर ही का प्रभाव है कि रोज इन्द्रप्रस्थ जयौष्ठा, गण्डनिपुत्र बलीक आदि बड़ी-बड़ी राजधानियाँ जो किसी समय आर दिनों का जंपल की बिनफी लम्पाई-बौड़ाई मोजन और कोर्मा के हिसाब से भी और जहाँ की मनुष्य-संख्या ४० लाख २० लाख १० लाख की निमती की भी यह इस समय बटुवा तो जवाड़ पुण्युओं के धोमलों के लिये उतुषा है, कोई-कोई नाम मात्र को भव तफ बिघपान है। मन्वन् वैरिद्ध कच-

कृष्ण बंबई जो एक समय बडुवा लो उबाड़ अंगल तपा जसमल मनु
 प बही अब बाकाप से बाठ करले हुये गपनस्युक प्रासाद स्वयंप्रिय
 मन्दिर कड़े हुए हैं बही बचला सकनी अपनी बचलता से मुह मोड़ बि
 स्पायिनी हो समूह की तरंग सी हिमकोरें मार रही हैं इत्यादि। इस बात
 कक की महिमा का पार कील पा सकता है तब हमारी धूर्त देखनी कि
 बूते पर इस बकरर में पड़ने का अधिक साहस करे ? पड़नेवालों के नि
 श्चिरोपार्थ इतना ही सही।

जनवरी, १९००

३—संसार कमी एक सा न रहा

सूर्य चन्द्रमा पृथ्वी तथा दूसरे-दूसरे ग्रह और उनके उपग्रह आदि यात्रात् भ्रमण सब अपनी-अपनी कक्षा में चलते हुए कमी एक क्षण के लिये भी स्थिर नहीं रहते। तब इस दृश्य-जगत् को संसार "चलने वाला कहना उचित ही है। स्थिर पदार्थ चाहे चिरकाल तक एक रूप में रहे भी पर जो चलने वाले हैं वे एक ही प्रकार के और एक ही रूप में सदा बचाने रह सकते हैं। जो कल वा सो आज नहीं है जो आज है सो कल न रहेगा। छिन-छिन में नये-नये गुण मिलते हैं। लड़क से बचान हो गये बचान से बूढ़े हो जाते हैं। बड़े प्यारी-प्यारी मुग्धमूलच्छवि जैसे देखते ही आँख सुमा उठती है जो बुढ़ाता है जिनके बूझि-बूझरित स्वभाव मुग्ध सुहाबने कोमल अंग-भरण के हरम-परस को भाग्यहीन जन तरगत हैं—

“चिरालुतस्पर्शं रतवता ययी”

उसका सब रङ्ग-बङ्ग जबानी के आने ही अथवा यों कहिये पीरान्द बीत जाने पर किञ्चोर-अवस्था के पहुँचते ही कुछ और का और हो गया। भाग्य-अवस्था की मुग्धमावुरी अट्टमिम धरलता और छिपाई में समाना पन और कुटिमार्ई जगह करने लगी। स्वभाविक सौन्दर्य में बनावटी समोनागन सा समाना नई-नई सजावट की ओर जो झुक पड़ा। एक जैसे की धारिणी और छदाम के मिट्टी के बिलौने में जहाँ ब्रह्मानन्द का मुक्त मिलता था वहाँ अब दो-चार जानों की बिलौनी ही क्या है? रप्यों की बात-बीत आ लगी। लड़कई का उदार समभाव और मन्तोप नहीं एक नाम में भी न रह सका। सुष्वा नामक हिम बोस्ती या बुरमनी का बाजार गरम हुआ आगिनी और यागुनी का जमका हुआ विषम भाव और मन की कुटिमार्ई ज्ञान-शक्ति बढ़ने के साथ ही साथ निज-निज

कत्ता बंबई को एक समय बहुधा तो उजाड़ कमल तथा जलमय बगुन
 से बड़ी बल आकाश से बाध करते हुये पमनस्पृक् प्राणाय स्वर्भर्मंडल
 मन्दिर बड़े हुए हैं जहाँ अचमत् लक्ष्मी अपनी अचमत्ता से मूर्ह मोह विर
 स्वामिनी हो समद्र की तरप सी हिलकोरें मार रही हैं श्याधि । इस काल-
 शक की महिमा का पार कील या शकटा है तब ह्मासे कुछ लेखनी किंत
 बृते पर इस अककर में पढ़ने का अपिक साहस करे ? पढ़नेवालों के जित
 बिलोपार्थ इतना ही सही ।

बलवरी, १२०५

३—संसार कमी एक मा न रहा

सूर्य चन्द्रमा पृथ्वी तथा दूसरे-दूसरे ग्रह और उनके उपग्रह आदि याम्बु भ्रमण सब अपनी-अपनी कक्षा में चलते हुए कभी एक क्षण के लिये भी स्थिर नहीं रहते। ठीक इस दृश्य-जगत् को संसार "चलने वाला" कहना उचित ही है। स्थिर परदाबं चाहे चिरकाल तक एक रूप में रहे भी पर जो चलने वाले हैं वे एक ही प्रकार के और एक ही रूप में सदा क्योंकर रह सकते हैं। जो कण वा जो आणव नहीं हैं जो बाब है सो कल न पहुँचा छिन-छिन में तबे-मये गुल जिनते है। लड़के से जवान हो मरे जवान से बूढ़े हो जात है। वह प्यारी-प्यारी मुग्धमुग्धच्छवि जिन देखते ही जाँच गुजा उठती है जो जुड़ावा है जिसके बूँसि-मूमरिण स्वभाव सुन्दर सुहावने कोमल अंन-अत्यंग के दरम-परम को धाम्पहीन बन तरमने है—

“चिरात्सुतल्पयं रत्नतां यवी”

उसका सब रह-रहूँ जवानी के जाने ही अबवा यों वरिंसे पँडित बीत जाने पर विपोर-अवस्था के पहुँचत ही वृद्ध और वा और हो ग। बाल्य-अवस्था की मुग्धमाधुरी अजुर्विम सरलता और शिवाँ में काल एक और वृद्धिवाई जगह करने लयी। स्वाभाविक कौट्य में अल्पत सलोलापन सा मयाया मई-मई जवाबत की मोर जो एक ग। एक वैसे की धीपीनी और छराम के दिटी क शिवाँ में जहाँ अल्पत क मुन मिलना या वहाँ अब हो-चार जानी की दिती ही है? एक का बात-बोल का लगी। लड़वाई का उदार हस्तार और स्नान यों एक बाल में भी न रह गया। गुन्य, मानव विंसे बंटी न मुन्टी का बाजार परम हुआ, आदिरी और कन्दुके का कथा हुआ चित्त भाव और मन की वृद्धिवाई अक-दलित शरं के क है इन निर-नि

अधिक होती गई। ह्रींसे-ह्रींसे पूछ लफ्फाई तक पहुँच नीचे को खिसकने लगे गरहपचीसी को नाथ बेहलसाली को भी डाँक अबेड़ की गिनती में जा गये। बस अब खिसके सो खिसके बास चाँरी होने लगे छी-छी तरह पर बिजाब कर पुपाने ठिकरे पर नई कसई की भाँति पहले का-छा-कुर छी रंग फिर साया चाहते हैं किचकिचाते हैं बार-बार सोचते हैं कि नई बबली और बड़ती जमर का जोड़ तरोपाजा हो जाता। बासों ही के सुकैर हो जाने के पम में बूबे बैठे बे कि बात जो हीरे की बमक को भी बचाते हुये मोतियो की लड़ियों की तरह सोइ रहे बे कगारे पर के रुख की भाँति एक-एक कर गिरने लगे। मुख के भीतर बोड़ी-बोड़ी बूर पर मार्गो बिम्ब्य-मर्बत का एक-एक लड़ा-सा बड़ा कर दिया गया। जबर नेत्र ने भी जबाब दिया अपने की हाजत हुई, बिमाग कमजोर पड़ गया। हाकिजा दुरस्त न रहा। जो बात पहले एक बार के कहने या सुनने से अकिस की लगय में मार्गो सदा के लिये टिक-ठी गई थी उसे बठे पाहुने की भाँति बार-बार बुलाने हैं, मोच्छते रहते हैं, पर सिबाय उषट जाने के बुद्धि में किसी तरह टहण्टी ही नहीं।

‘प्राप्ये समिद्धिते मरणे नहि नहि रक्षति बुद्ध्म करणे।’

इतने में काम भी मान साये मूँह पर सिक्कन माने लगी हाँकी का छोड़-छोड़ कर मांस और बिमड़ी टौर-टौर हकट्टी हो घरीर के समपर मैदान में जगह-जगह टीसे स खड़े हो गये।

भूतिगप्या स्मृतिबूरं क्वात्प्रचलित्ता द्विजा “बाय्यंयं किमनु-
प्रप्तम् ?”

अनु, यों ही होते-होते सत् सत्तर अस्मी पडुबि दिन करीब जा गये मूँह बाय रह गये।

‘एवम नाय सय है दो बार नित्य है।’ ‘भूतानि कास पचतीति

बर्ता।" "अहोऽहनि नूतानि पण्डिति यममन्विरं । श्रेया जीविन्सु
विण्डिति किमाश्चर्यमस्तः वरम्।"

संसार कभी एक-सा न रहा हमारा वह सिद्धान्त अब आपा मग
में । और अब आगे बढ़िये । पञ्चमूलात्मक पञ्चप्राणवाले जीव जो
इस जग और संसार संसार में एक से न रहे तो कौन अचरख है जब अटल
और सदा के लिये स्थिर बड़-बड़ पहाड़ सैकड़ों कोस के मैदान और जंगल
भी काम चाल और के और हो जाते हैं ।

"पुरा ब्रह्मलोकं पुनितममवसत्प्र सरिताम् । विपर्ययंजातो घनविरल
मत्वा क्षिप्रिच्छाम्।"

जब राम-चरित में भक्तभूति कवि लिखते हैं कि पण्डित जन में जो
पहिले होते रहे वे नदियों के प्रवाह के कारण अब पुनित जन गये गये और
विरले जंगलों में उलट-पुलट हो गई वहाँ जंगल जंगल वा वही अब कहीं
वही हो-एक पैड़ रहे नये और जो बिल्कुल पठारी मैदान या वह जंगल जंगल
में बस गया इत्यादि ।

तो निदरथ हुआ कि परिवर्तन जिसके हमारे पुराने बुद्धे अत्यन्त
बिचक है इस अस्मिन् जगत् का एक पुन्य धर्म या युग है । वही नये सोच
इस परिवर्तन पर अलग न होकर चिड़ने लगी वरन् इसे तरबरी की
एक सीढ़ी मानते हैं । हमारे अभाग से भारत में परिवर्तन को यहाँ तक सोच
कर समझते हैं कि दिन-दिन अत्यन्त निरी दया में आकर भी परिवर्तन
की ओर लड़ी मन दिया चाहते यह हमारी परिवर्तन-विमृगता ही का
कारण है कि हजार वर्षों से विद्विषियों का पदावाप्त सहकर भी अभी एक
छम धर के लिये जीवनी-नादी में रक्त-सञ्चालन न हुआ । वैसे इन्म
की तरबरी इस जमीनकी जगहों में हमारे देश में हुई है वैसे किंगी
हमने देश में हीनी तो वह देश मूमणन वा निरोमधि ही जाता । परिवर्तन
विमृगता के कारण इस सबकी विद्यावृद्धि बाल में बकक की प्रति
मानव हीनी है और जो पीया जम यहाँ के सोपों में देगा जाता है उल्ले

यही निष्कर्ष निकलता है कि इस बीम भारत के साम्राज्य के बिये बर
 कई घण्टायी चाहिये। अस्तु, चाहे जो हो जो हम अब है बर बर पहले
 ऐसे न ब बोड़े बिन के उपरान्त कुछ बीर हो जायमे क्योंकि यह संसार
 कभी एक-सा न रहा।

अरवरी, १९२२

४—ईश्वर भी क्या ही ठठोल है !

सोच कहेंगे इसे कुछ उफ़मान हो गया है इस उम्रघर्षी सभी के जीवन के अनुसार नास्तिक बनने का हीसमा चर्चमा है जो उद्योग अथवा अपार अशोरभीयान् महती महीमान की धाम में भी एसी बेअदबी और बिछार्द के साथ कुफ़ का कसमा कह रहा है। जो हो पर मुझे तो बहुत से अस्तव्यस्त कारखाने बेस कुछ ऐसी ही भी में भावनी है कि वह या तो कुम्भ करण के पेठा आई बनने की हथमा बुझाव रहा है या यदि सब अस्तव्यस्त कारखाने ईश्वरता के बिबदान है तो वह फलपौर भीर में तो रहा है। या जायता है तो कोई बड़ा ही ठठोल दिस्तबीबात्र मसतरा है नहीं तो बेकिर और असाधमान होने में तो कोई धक नहीं है।

जिस कसौली परिभाषा और मूत्र के अनुसार हम सोच जायस में एक दूसरे को जाँचते और परखाते हैं वही परिभाषा यदि वहाँ भी जपायें उसे परखें तो उनकी ईश्वरता की सब कसौली तुम जाय और दुनिया की हासन देस अकब चित्त में वही समाय कि वह कोई बड़ा ही अनोखा खेमबाड़ी है। सब माँति स्वतंत्र जाय एक बड़ा मन्नागर बना बैठा है और इन संसार को एक नाट्यशाला की रङ्गभूमि बनाय जैसा चाहता है वैसा लेस खेला करता है। असा यह मसतरापन नहीं था और क्या है कि मनुष्य एक तो निपट परतग्न सममें भी उनका मन लेया नाजुक और कसबोर कर दिया गया पर मुवाबिले के लिए सड़ाई उसकी उन दुपट अजम विषय बाहना के साथ ठान ही गई जो रिशारी जानवरों की तरह सभी इसे अपने कसमें में भाय नष्ट भष्ट किया चाहते हैं और इन मुटेय से बनने के लिये जो रिशारी बिबेक इससे साथ कर दिया गया है वह न जानिये कि वह अग्ने साखामे में पड़ा-मड़ा हो रहा है कि प्रतियोग मन बेचारे पर गया-वया जाफ्तें अली रहती है बिबेक अजमस्त बपरवाट की धर

एक नहीं होती। इसपर तुरंत यह कि सब तरह के में पड़े हमारे मन को कोई इच्छामार हासिल नहीं कि विवेक से कुछ कह सके जिसका बेतना और कम पठना कमी को आकस्मिक पटना कमी को गिरल्लर के अम्यास ससंग या सत् शिक्षा पर निर्भर है। कमी को ऐसा भी होते बेसा मया है कि मन सब और से साधार और छोड़-मोह के सिर्फने में अत्यंत ही कसा हुआ होकर विवेक की सरण डूकने लगता है।

तात्पर्य यह कि ये बिलगी बालें हैं वे सब मनुष्य की क्षिति के बाहर हैं जिस पर उस बड़े गटनावर की कृपा हुई या जिते उसने चाहा कि अपने जोस-खिलीन से बरी करे, उसके जित में विवेकमानु का प्रकाश कर दिया गया नहीं तो निबिबेकियों को पक-पक में गिरते पकते लड़कड़ाते बेब आप बैठे-बैठे खिलखिलाया करता है और अपनी ठठोलबाजी को लूब तरलकी देता जाता है। और आवे बड़िये फिटने गरीब मुक्कड़ कुटुम्बी बाने-बाने को तरसते हुये सबेरे से सजि तक दाकी मेहनत के उपरान्त इतना भी नहीं पाते कि कुटुम्ब को मनमानता पाल सकें। आज पी है तो ठेल बुर मया लकड़ी है तो गीन का टोटा है। इधर एक लड़का पड़ा-पड़ा मूख मूख खिन्ना रहा है उधर बूछरा बूख बठासे के सिमे मथलाया हुआ है। पट पट की सब बात जाननेबाना बिस्वभ्यासी बिस्वभर कहलाकर भी जरा नहीं धरमावा बरन् पड़ा-पड़ा त कटा हुआ मनोमन प्रसन्न फूटरा होता जाता है। उधर एक बख सूम के पास एकबारगी मनमाना अंसक्य बन कुरै दिया गया जिसका बिलसनेबाना भी टूटे पेड़ के माफिक "स्तम्भन भीवार इबाबदिय"। ठिवा उस सूम के बूछरा कोई नहीं है कि इसके मरने के बार उस बन को काम में लावेगा अब तक जिया अत्यन्त कर्बवता के साथ बिबली काटी किसी की कुछ देना तो सीखा ही नहीं अपने खाने पहनने में भी निष्पत्त करता रहा। यहाँ तक कि लग्ना लगने का समय जा गया प्राण घटीर से प्रयाण किया चाहते हैं पर स्वया जमा करने का ग्यास बुर न हुआ। उस समय भी राम-राम कहने के पलदे हाम बनबा — न स्वया कह कर उन स्वया। यह बीठा-बीठा उस इप्प की सब सीना

देख-देख हुआ किया जिसके लिये मरीच बुदुम्बी जन्म भर तरसा किया ।
 वह धन बर्हा दान-भोग के बिना स्वर्ग और निष्फल पड़ा है । क्या इसी
 को साधनागी और न्याय कहेंगे ?

मयल है "बकप मारे रोवै न रे" । हाइ बही मांस बही आम बही
 सडू बही । 'तुम कत बख्शय हम कत सूब हभरे सडू तो तुम्हरे डूय ।'
 तब यह जिन और जेठा का मेक कैसा ? तुम्हें जेठा किया हमें जिन क्यों
 कर दिया ? हमन ऐसा क्या अपराध किया कि सैकड़ों वर्ष से भुगत
 माय जुगलठे बसे जाते हैं और सब तो वह ब्रह्मा का समी है कि बीजम
 माय हो रहा है तब भी उस ठोस के मन में जरा बसा और इनसाफ जगह
 नहीं पाठा । हमारे किसान मर-मर, पच-पच करोड़ों मन गहूँ पैदा करे ।
 वह यदि सब का सब हमारे काम में आवै तो बुजाये न बुई पर गेहूँ सत
 में रहता है तभी रैलीबंदर के कारिन्दे दाँव-दाँव भूम खेत का खत बुकना
 कर लेते हैं हम गूँह ठाकते रह जाते हैं जमन पर भी बारह सेर तेरह नेर
 से आय नहीं पा सकते । इसी को क्या और इन्साफ कहेंगे ? काबुल की
 पहाड़ी बरती में मेवा पैदा कर देना और बज की जर्मन भूमि में कटौती
 मरीस का जन्म । पड़े-निलखे बिडानों को निर्बन भूस निबिबेकी को घनीपाप
 गुलाब के वृत्त में बाँटा—सुपान सुपोप्य को एक बुकामा भूगिन—सर्वाङ्ग
 मुम्बर स्वच्छ हिन्दी को बसाबतल—परेगिन की एकस जाल और बरेब
 से बरी उर्दू को बरिबपोत्तर की बरालन में स्वान-दान—इत्यादि छप
 जखना ठोसपन नहीं तो और क्या है ?

५—दिल्लवहलाब के जुदे-जुदे तरीके

जब बाबरी को कुछ काम नहीं रहता तो दिल बहलाने को कोई न कोई ऐसा एक काम निकाल लेता है जिसमें समय उसको बोन न मानूम हो और वह कहने को न रहे कि बकल काटे नहीं छटा।

इस दिल-बहलाब क जुदे-जुदे तरीके हैं जिनमें जोड़े से यहाँ पर दिखाये जाते हैं—जितने सब काम-काज से सुनकारा पाय दिल बहलाने को वाहर निकलते हैं। सदर बाजार के एक छोर से दूसरे तक वो बकलर किये कभी इस कोठे पर ताका कभी जम अटारी पर इधारेबाजी हुई दिल बहल पया बर लौट जावे। जितना का दिल-बहलाब हुकेबाजी है सब काम से बरतत पाय किसी बैठक म या बैठे हाहा-ठीठी करते जाते हैं और जितना पर जितना उदात्त जाते हैं—हाहा-ठीठी बीन-बकलर का मीका न मिला तो के बे-जक बे-नुमियाब बी-उबियाऊ कार् वास्तान छेड़ बैठे, बघ्टों तक उसी में समय बिनाया बर की राह ली दिल बहल पया। कितने जते जाते हैं राते में कोई दोस्त मिस पये बो-बो कन्धी-मक्की बीड़ी-बीड़ी इन्होंने उसे कह मुताया उसने इन्हें बहा बपनी-बपनी राह ली सब पकाबट बुर हो परी मन बहल पया। कर्कषा-बपड रिषया का दिल-बहलाब सवाई न किरलें और बापस म लौटी-मौटा न करलें तब तक कभी न बचायें भी ऊबता रहे जित म उदासी जावे रूँ मानों उस दिन उन्हें उपवास हुआ जगल बवाई ईड़ी बूतों का दिल-बहलाब तन्ना और बबाब है दो-बार पुराने समय के सबीत इबट्ट हो तमालू पिण्ड-पिण्ड बूतते जाते हैं और ती बर्य का पुराना काई जिकिर छेड़ बैठे। बहुया जात विरादरी के सम्बन्ध की कोई बात बबराय होनी नाक बड़ाय बड़ाय मुँह बमार-बपार जितनी जने मानुष के बुच में बोब उदात्त करते बी बार कन्धी-मक्की कह

गुन सिवा मन बहल गया। कोई-कोई ऐसे मनकूच भी हैं कि फुरसत के बरफ किसी झेंबेरी कोटरी में हाथ पर हाथ रखके पहुँचें तक चुपचाप बैठे रहें ही से दिलबहलाब हो जाता है। बाज-बाज लीसिलिमे नई रोपनी वाले जिनका किया बरा बाज तक कुछ नहीं हुआ मुस्क की टरकी के लक्ष में बाज बाज इस समा में जाय हुआकू मचाया कम उस कलम में जा टाय-टाय कर जाये दिल-बहलाब हो गया। इन्हीं में कोई-कोई काठ-पप्य गुन्बटास पिटी कसब या समाज के सेन्टरी या यजमान भी बन बैठ और रीकड़ो रपया बसुस दर बकारने लये। पांडों की कदल सभारी की सभारी जमाना साथ आमदनी की आमदनी दिलबहलाब मुफ्त में। सब पूछो तो इनका दिलबहलाब सब से अच्छा हयें ऐसा दिलबहलाब मिसला तो सिवाय दिल बहलाने के कोई काम करने के उद्योग जाते। अन्य हमारय समाज बग्य हमारै लोगो की लक्षियत की मुकाबल जिनके बीच लसे-लसे उमदा स उमदा दिल बहलाब—मीनूब है। इसी दिल बहलाब का एक बम नीच के लोक में दिया गया है—

“काव्यशास्त्रविमोचन कालो पच्छति मीयताम्।

व्यसनम तु सूखीया विदया कलौष वा।”

उच है विद्यारमिक पई-तिले विद्याओं का बम अपड साधारण लोको से जैसा और सब बातों में निरामा है वैसा ही दिलबहलाब भी अनोख बम वा होता ही चाहिये। सामान्य मनुष्यों का दिलबहलाब विषयबानना का एक बंग रहता है वही विद्याओं का दिलबहलाब विद्या-सम्बन्धी बुद्धि का बढ़ाने वाला और बुद्धि सात्त्विक बम वा होता है। इन्हीं में ऊपर कहे लोक में निरामा गया है कि बुद्धिमानों का काल नाभ्युत्थान के पन्ने पढ़ाने के आनन्द में बीतना है मुरों का लक्ष्य दुर्धमन और सोने में कष्ट होता है। अनि दुर्गट बटिन विषय जिनमें मस्तिष्क को विषय परिधय पड़ता है विरवास तक जगमें अज्ञान के उपरान्त बहुरा एक लक्षियत उस आर से उसाद जाती है तब भीम विषय जिनमें बुद्धि को अधिक परिधय

नहीं है और सुकुमार कोमल बुद्धि वालों के पढ़ने के योग्य है वैसे काव्य नाटक उपन्यास भावोत्पन्न किस्से-कहानी इतिहास भूगोल इत्यादि के पढ़ने से बेर तक विभाग को काम में लाने से जो उस पर बोझ आ जाता है वह हटका होकर बोलचाल उस बुद्धि विषय की ओर बँसता है। नैतिक शिक्षाकरण और गणितज्ञ 'मैथिमेटिषियन' का विमलबहुलाब महाशयरी आलसी और बीछित की धर्मिककार्यों के हल करने से बँसा होता है वैसे किसी दूसरी बात से नहीं होता। कथमत्त चल पड़ी है—शैकाकरण अर्थात् भाषा के सापस में पुनः-अप्य के आनन्द का उत्सव मानते हैं।

‘सर्वथाभाषास्यैव शैकाकरणं पुत्रोत्सवः सम्यग्ते’

इसके यही प्रयोजन है कि जिस विषय का मतम करो वह मत में बैठ जाय तो मत प्रसन्न हो जाता है और इतनी खुशी होती है मारों लड़का पैदा हुआ। इसी तरह “युक्तीविद्य” बीजगणित का कोई दूसरे हिस्सा के समान हो जाने पर मन्तित करने वाले के चित्त में जो सुख होता है उसके आगे विषयबाधना के निकृष्ट कोटि वाले आमोद-प्रमोद किन्तु हकीकत में है। इसी तरह सम्य समान का भी विमलबहुलाब हजार-ज्वर बेबाय भूमने के बने अपने समान उबार प्रकृति बालों के साथ संभाष है जिसकी आपस की बात-चीत उत्तम उपदेश से पूर्ण रहती है इसी से किसी ने कहा है—

सदा सन्तोनिपन्तम्यो यद्यप्युपदिशन्ति नो।

या हि स्वस्ववास्तेवाभुपदेशा नवन्ति ततः॥

सुबन्ध सत्पुत्र्य यद्यपि कुछ उपदेश न करें तो भी उनके पास जाना उत्तम है जो आपस की अनरी बात-चीत है बही उपदेश होती है। कुपयता की मूर्ति हमारे सैठ की का विमलबहुलाब रूपये की संख्या है दुष्णी-पुर्वे के मुपतान से छुटी पाय जब कुछ काम न रहा बीजिवा खोल बैठे, हो-बार हजार रुपया गिन डाला दिस बहस बना। घरजी तथा कुवाटी का विमलबहुलाब यत्न है। उसके कुवाटी को जिस दिन हजार-पाँच-सी पीठ हार न हो नै भी डरता रता है, जिसके जीवन का सर्वस्व घूट है।

इष्यं नश्यं घृतेनैव वारा मित्रं घृतेनैव ।
वर्तं मुक्तं घृतेनैव सर्वं नष्टं घृतेनैव ॥

बुझाए जुबा की बिना सिहासन का राज्य मानता है—

“न गन्धपति पराभयं कुलक्षिण्णं हृरति वदति च त्रिगुणसंबन्धात् ॥
वृपतिरिव निकाममायदर्शी विभक्तता समुपास्यते जगत् ॥”

एसा ही घण्टी जब तक पीठे-पीठे बेहोश हो चहुबन्धे में न बिरे उबका दिन न बहनेवा । हमारु दिन-बहुमान उमरे से उमरा टटका रखीसा मजमून है जिस दिन कोई नई बात बूझ गई हम मिनिट में खरें का पुरां भिल काका उस दिन भिल बड़ा प्रमत्त रूहा नही बैठे-बैठे सिर पर ह्वाप रकने पहरां लोचते रहते हैं अन्न को उडिष्ण भिल भिल निरस्त हो बैठते हैं । पेसा ही अपने रमिक प्राहकों को भी एक दिन के लिये दिनबहु-साब हम होतै हैं जिस दिन हम उनसे या भिलते हैं के अपमा सुबिन मानते होये । इत्यादि इत्यादि दिलबहाध के जुदे-जुदे तरीके यहाँ लिखाये गये ।

जनवरी १९१६

६—उपदेशों की अलग-अलग शानगी

जहाँ पृथक् के लिये सबेरे से उठ सीत ली अनेक-अनेक विन्ता भी भ्रष्ट वाचनवीर रहती है और मोल-तैल-सकड़ी की चिकिर एक बम न पुरसठ गद्दी सेने बेटी जहाँ लोगों का तरह-तरह का उपदेश भी भी न डीबाडोल किसे रहता है किस्का-किस्का उपदेश तुम किसे सच्चा मां किसे झूठ। मुक लोग उपदेश देते हैं—बच्चा बुनिया के बखेड़ों में न पड़ो बिचा-मुठि डोलों लग्मार्ग की मुटेरी है तुम बनने कोने में बैठ पोकि नयन किमा करो जो कुछ कमा लामो स्वी-युन पाहे मुंह टाकटे रह जा मोटा-मोटा बान्नी जो कुछ बच उठे ठापुर भी को बर्षन कर बिवा का सत्तों के सत्कार से जो बच उठे मुक महापय की भेंट कर बिवा करे बीडे से अंबरेजी पडे बिचमी लोम उठ कड़े हुये है जिन्होंने अपना न संघोबक और रिफर्मर रक बिवा है वे भाति भाति की कमेटियां ब... सभामें कर तुम्हें उसमें बुलावेंगे और सब तरह पर तुम्हें बड़ाबा देवे पर तुम बीकस रहना उनकी मोर न मुक पडना नहीं तो बच्चा नरक की जाव में पड़े-पडे सड़ोने कमी उदार न पावोमे।

पावरी साहब बाजार में कड़े उपदेश देते हैं—ममू ईसा की सल पयो बह तुम सबों के पाप की बठरी का हम्माम बन सुमी पर कड़ मया न कुछ बाज का काम न तपस्या की बकरत न बड़े-बड़े संयम-नियम से गरीर सुखाने की आबसकता है जमबा से जमबा सराव पिमा करो देह को आराम और मुन पहुँचाने में नहीं से कसर न होने पावे। चिक ईसा पर इमान लामो मुक्ति तुम्हाटी बासी और किन्की होनी बस और चाहिये क्या—“मुक्तिदख मुक्तिदख करतब एब”।

अग्ली बरत की लोइही बप्पन बुकियामें उपदेश देती है—बेटा जब तुम सवाने बडे पर दुआर की चिकिर रकबा करो, बुलहिमिया की

मरिचा दूध में है, बतमिया का स्याह विमरान है सदा फनफड़ बने रहने से काम न लिये। कुपूत आने तपत सपूत आने मवत मघवान् देलाई बार दिन में तुम मत्वी पोटा के होइ ही। मन-मन पट-पट करते घर में बाँब न रक्खा करो पानी नही काम कौन पानी काम का है कम का ही। ऐसी बात बसो जेह में जग में हौसी न हो।

पर बानी समयमाटी है—हम सौ-सौ बार कहा साध मन्त्र की बात हमसे सही नहीं जाती हमने अलग सँके रहे, महीने में जितना बचाते हो माई-अम्बन के विमाले पिलाने में सब का सब उठ जाता है उठी की बसा कपटे रहे तो सड़कों से मल स तिस तक हम सब भाय। अन्त में प घाई बाप तुम्हारे कोई काम न आवेवे। पाछ पुँजी बनी रही तो सब माई मतीने बनेवे नहीं तो कौड़ी क तीन-तीन होवे तुम जानत नहीं। न बाप न भैया सब से बड़ा रीखा को रुपये को तुम ठिकरी कर रहे हा अभी तुम्हें समझ नहीं पड़ता पीसे पड़नाबाने।

मार होम्न उपदेन देन है—बाही हो! बुधिया के मुख और आराम से मुँह मोड़ करिब छोबन के लिये जी दिव शान्त हो विममें अपना बने सो करो बबानी,नी उमर साने ललने की होती है तुम बनी ही से बुद्धी की तरह बुद्धरपी और बुँबापी का नामा मोड़ बैठ सो क्यों? घर में पढ़ बड़ लड़ा करते हो शाम को बघ बाजार की हवा का बाबा करी थोड़ी देर के लिय मार होस्तों से भी मिल लिया करो ना एक म्याम छोके ली

“साक्यत की बुडा जाने घर तो आराम से मुँहली हूँ”

“ना से मधुसूदन कहे हा बानीर माय।

रा की राम प्रभाव कर भारी मरिच काम”

“भरा के बाब के हम को तो बुद्ध कनाय नहीं

घराब बार बिलखे तो बुद्ध हराम नहीं।”

इत्यादि शीकड़ों पढ़ाबाव प्रमाण के लिये नहो तर बाँप दे, जिस—

कर को तुम्हारे पर हावा भी बाहर लौका चाहें तो न टूटनी । तब तुम्हें आमा-पीडा करने की जरूरत अब क्या है अब तक बेतकम्पुषी न हुई तब तक बीसती क्या !

बैगम साहबा कहती है—बुधा कसम नहीं भी चाहता है तुम्हें बाँध का बोट न करे अब तक नहीं बेलती भी उकताया करता है । हमसे क्या बुझूर अब क्या भी आप कई दिनों से नहीं जायें ? यह निदुराई कहाँ सीखा ? हे मेरे कन्हैया मे तो अपना बल प्राण जीवन सब तुम्हें सौंप चुकी तुम्हारे कबील कपुर बुझामणि तुम बुर समाने हो मे तुम्हें क्या सिखाऊँ ? छठ दिन आपने पाँच सी रुपये दिये थे पर अम्मा कहती है उठने में आनल तैयार न होगी (हँसकर) अम्मा माहक छकटाती है । आपकी सबाबत का क्याल किया आप तो पाँच सी क्या पाँच हजार कुछ बड़ी बात नहीं है । बहूती नंगा न अब न हाव बीबोमे तो बूसर बटा कील सा होमा ।

सनातनधर्म बासे उपदेश देते हैं—'बाप बाबा की लीक पीठें आजी पही सम्पूर्ण बेबसास्त्र का निबोड़ है । हिन्दू धर्म का सापंल है ।' हमारा उपदेश है बाप-बाबा की लीक पीठें के बरबर कोई बूसर पाप ही नहीं है, बाप-बाबाओं की कनककली पर तुम्हें पिन न हुई हो तुम्हारे पकने सिखने पर सागत है । उनकी लीक का मेटना ही महापुण्य है सपूती है, यहाँ है, हिन्दुस्तान की सम्पत्ता के विकार पर रख देने का सुनम सपाब है । यह सनातनधर्म नहीं है बरन् प्रथमित्त बुराईयों को मसा काम समझ उसकी जारी रखने के लिये टट्टी की जाड़ में धिकार है । बाह्यकों के लिये छोटे बड़े सबों को अपने बंगुल में रखने का सहज सटका है । हिन्दुवादि के अधिक पठित होठे पाने का गुला डार है । मजसूस बदमाशों ने बिलमें सबसा कि यह काम को कमजोर और बिगाड़ने का बड़ा बख्खा जरिया है उन्हीं-उन्हीं बाठों को बुन-बुन कर सनातनधर्म में रख दिया । अब इन देनों के लोप "रिफार्म" सुबार और संघोजन की दृष्टि से उन्हें मुक्ति स्मृति ठे पिकाठे है तो नहीं पता नहीं लगता कि बिस भूम पर यह बुराई और टूटीय बल पड़ी बलिक् मुनि और शास्त्रों में बिबे मना किया पाप और

दुरा कहा उसी को समाप्त का सिपाया पाने वाले बदमाशों से विहित कृष्ण और घमाई का काम कहा । इन पिताने समाप्त से दूर दटना ही अब कस्याच का मार्ग है हमारे इत अन्तिम उपदेश पर जो बूढ़ होने से दास्मभाव की बोड़ी से छूट बहुत जल्द प्रभुता पाने के अधिकारी हो जायें ताब करने को आरपी क्या, जिसका मन हो आजमा के देख से इयाकि । हमने बहुत तरह के उपदेश आपको कह सुमाया अब उन पर चतना और उन्हें मानना आपने समीन है ।

यद्यपि दुष्ट लोकाविरुद्ध न करणीयम् ।

न जानिये किस गोठिन अकिम वाले अहमक से इस कहावत को प्रचलित कर रक्ता है । हम कहते हैं यदि मुठ है और लोक विरुद्ध है तो यह अहमक करणीय है । जब हमें निश्चय हो गया यह मुठ है शास्त्र और अकिम दोनों इसे कबूल करती हैं तब सतके न करने में आया-पीछा की अकरत क्या रही ? जैसे १५ वर्ष की औरत २५ वर्ष के साथ ब्याही जाया करे तो कौन सी हानि है ! शास्त्र भी इसमें सहमत है और अकिम कबूल करती है कि १५ वर्ष में स्त्री अपनी पूरी उमर का पहुँच जायगी पुरुष भी तब तक महहूपपीछी डाँक पढ़-लिख तैयार हो जायगा । बाप-माँ को बोला न होकर अपना निर्वाह अपने आप करने लायक हो गया तब मुझ से जीवन पार करेवा और पुष्ट रज-वीर्य के सन्तान पैदा हो वेस के सीमाप्य के हेतु होंगे । पर यह लोक विरुद्ध हागा है संसार में क्या मुँह निताई कि इतने बड़े-बड़े मड़की लड़के हा मने कौन-सी कज है जो ब्याह नहीं होता । मान्य होता है जानि में हेटे है । इस लोक-निन्दा को डर से जन्म-वर्षण्त नव तरह का बसेय उद्यत है अपने जीवार की तरफती में हर तरह बाधा पहुँचाने है किन्तु यद्यपि दुष्ट लोकाविरुद्ध यामी कहावत को अविचार्य विदे पाठे है ।

शास्त्र में लिखा है बन्ध पान को दना चार्हिय । अकिम भी मानती है कि हमारे बेटों जो बड़े-बड़े दान भिग निन्दे है सो हमीगिये कि वे दान

सोम्यता और बिद्या के हिसाब से दिये जायय तो संस्कृत का अक्षर पठन-पाठन बना रखा लोग शास्त्र के सम्बन्ध में परिचय करते रह्ये और कृष्ण के मुकाबिले उनकी विशेष कदर रखी सो अब इस कहावत के अनुसार ऐसा करने से लोक बिखर हुला है बिनाको क्या से मानते आये है उन्हें नैस न माने जाहे जैसा अपावन और अपाहिय हो बड़े स बड़ा बान पाने का बही अधिकारी है जिसे आप-दादा नीक पीटते आये है। इस तरह के दो उदाहरण हमने दिये पर इस कहावत के अनेक उदाहरण आपकी मिल सकते है। तात्पर्य यह है हमारी तरकी के अनेक बिधातकों में ऊपर की यह कहावत भी एक महाबिधातक है।

सितम्बर, १९२४

७—विश्राम

विश्राम के बुझ का अंकुर सरस और विमल चित्त के आसवास में जमता है और बर्माभूषणरूप उस से निज हृद्य-भद्य और प्रफुल्लित हो बड़ सोच और परसोक सम्बन्धी मीठे और स्वादिष्ट फलों से सब संसार में मनुष्य के जीवन को सार्थक करता है। सुमार्ग पर चलने "शुमार्ग" से बचने और जगत् के प्रबन्ध की उत्तमता क मिये विश्राम एक मात्र सहारा है। अदृष्ट और परसोक में विश्राम से जो कुछ भलाई होती है उसकी व्यवस्था कौन जाने बिना देखी बात का ठीका कौन से और कौन लोगों के नाच गिर पचाव।

प्रायः बार्थनिक और कुतर्की विश्राम की प्रमाणी को एक खेस गसीना समझते हैं और विश्राम करमवालो पर हँसते हैं पर जिन सत्यु रवों की अनुक्तिम सरस बुद्धि में पूर्वापर का विचार और स्वच्छीति पर ससार-जन की घुरी के जलम का रबैया है वे विश्राम को गुच्छ कमी न समझें। बाह बार्थनिक हान के कारण विश्राम पर विषय भया न रखते हों पर जगत् के प्रबन्ध की रता क मिये वे यही कहें कि जहाँ तक प्रजा का विश्राम पमपय और उपामना-काण्ड में बूढ़ रहे वहाँ तक अच्छा। हजारों मार्गों एस मनुष्य है ग्रासकर हिन्दुस्तान में जो सर्वथा विद्यापुम गूम्य हैं पर धर्म और ईश्वर तथा परसोक में विश्राम के कारण अनेक पापकर्म से बचते हैं और अचकल दगा या अज्ञान अवस्था में किसी पापा-चरण पर बँसा कुछ पदचाताप और अपयोग करते हैं। इसीलिये जम वास्त्र प्रबन्धना या नीतिप्रवर्तकों ने विश्राम की जड़ का और पूष्ट किया है बरि क बीना में तो यहाँ तक किया है कि—

'धेन्वपत्सर्वकर्मणि विद्याम्वरतः समाचरन्।
जानप्रति हि मेपावी अङ्गवालोक पाचरेत्॥'

उन्हीं तबियत वाले जिनमें प्रेम और भक्ति का कहीं स्पर्श भी नहीं है, उन्हें बिरकास का प्रचलित वर्तमान हिन्दू-धर्म सब ओर से बम ही बम पंचता है। कबाबिद् ऐसा हो भी क्योंकि मकहब के साथ मक्कारों में अपना पनिष्ठ शब्द बाड़ रक्ता है। पर धर्म सबकी सब बम ही बम है, हम ऐसा कभी न मानेंगे बल्कि उन्हीं संशोषकों का बोझ बोप है जिनमें भक्ति का किबिद् भी सदाब नहीं है।

हृदय वैतम्य महाप्रभु, नालक और कबीर आदि पुगने संशोषकों और इस समय के संशोषकों में यही बड़ा अन्तर जा गया है। पुराने संशोषक भक्ति यज्ञा प्रेम और बिस्वास से पूर्ण थे जो कुछ उन्होंने किया उसमें पूरातया हृदयकार्य हुय। हृदय वैतम्य ने संपूर्ण बङ्गाल को अपना अनुयायी कर डाला। पुटनालक देव से पञ्जाब घर को अपना बेसा मुड़ लिया। अस्तनाचार्य ने गुजरात को अपना कर डाला। रामानुज स्वामी ने मन्व राज में अपना पूर्ण प्रभुत्व स्थापित कर दिखाया। इन दिनों संशोषक बना फाड़-फाड़ पत्नी-गमी बिस्ताते फिरते हैं। पर उनके कहने का किती पर कुछ अन्तर नहीं होता। इसलिये कि ये बल्ले वैज्ञानिक बन भक्ति यज्ञा और सच्चे बिस्वास को अपने में नहीं जाने देते। अन्तर्वासी परमात्मा तो सदा ही चित्तवृत्ति पहिचानता है इसलिये वह उनको अपने उद्यम में यबाधित हृदयकार्य नहीं करता।

इन दिनों मूठा बिस्वास False belief चल पड़ा है। सभ्य समाज बाब अपने मुँहों को किसी धर्म-सम्बन्धी कार्य में लगे हुये देख उनके बिस्वास को फसल बिनीफ कह उन्हीं हुँतते हैं। पर हम कहते हैं, बिस्वास एही नीज है कि वह मूठा हा ही नहीं सचता। जिन्हें बिस्वास हुई नहीं उनसे उनका मूठा बिस्वास भी नला बल्कि यों कहियं जिस पर जिसका बिस्वास बम गया उनको वह बिस्वास ही लबाकार ही भावनानुकूल फल देता है। इसी से कहा है "बिस्वास फल दायक। जो कुछ ही भव इस समय हम देखते हैं तो बिस्वास की बड़ बहुत फट रही है। जिसका परिधाम संशोषते हैं तो बड़ा बर्षकर जान पड़ता है। आस्तिक्य बुद्धि ईश्वर में प्रीति

बहु सब बातें बड़े कस्यार की हैं, न जानिये क्यों हमारे सुसम्पों को हजर से अबाधि है बड़े सोम है कुछ समझ होने हम अपनी ओधी अस्य बुद्धि को कहीं तक पछताये जो बैठऊ तरबूज से उनके भारी और पीने दिमाग के साथ नहीं पिस बजती ।

जनवरी १९६६

बहुत कम पाये जाते हैं। ऐसे लोगों से समाज का काम तो मरपूर निकल सकता है परन्तु सत्य का पोषण नहीं हो सकता इसलिये कि उनका विश्वास भी गुस्से की रंभत पकड़ लेता है।

एक प्रकार के पुरुष और भी हैं जो सच्ची नीयत से विश्वास के पोष में तन्पर हैं और सत्य के अन्वेषण में भी उद्यत हैं किन्तु बुद्धि-बैमज में इतने पूर्ण नहीं हैं कि तर्क के द्वारा अपने विश्वास को सत्य के पास तक पहुँचा सकें तर्क तो करते हैं किन्तु उनका तर्क एकदोषीय है इसलिये सत्य का होना पूरा निश्चय नहीं कर सकते और बिना पूरा निश्चय के जो विश्वास वह कच्चा विश्वास है, इत्यादि। कई प्रकार के तर्क करनेवाले मही विश्वास पाये गये। पर सच तो यों है कि विश्वास और तर्क दोनों एक बूधरे इतना विकृत है कि तर्क विश्वास के लिये कुत्ताड़ा है। विश्वास को जहाँ तक चित्त में स्थान न होने तर्क की अग्रगण्यता कभी दूटे हीयी नहीं।

९—नीयत

नीयत अर्थात् नीय है और आदमियों के समान कामों में अच्छा या बुरा करार दिये जाने की एक ही कसौटी है। कोई काम जिसका परिणाम बुरा से बुरा है बुरा नहीं कहा जायगा अगर उस काम को करने वाले की कुटी नीयत से नहीं लिया गया तो उद्योग सफल करनेवाले को नहीं मिल सकता। जिसमें काम संसार में किये जाते हैं जानबूझकर किये गये हों या भ्रम से किये गये हों या उद्योग हासल में किये गये हों जब कि आरम्भी अपन होय या काम में नहीं है सब अवस्था में भ्रम या दोष की द्विपटी की नियामक नीयत ही है। पिनीमा से विनीता काम बन पड़ा हो पर नीयत उसके करने की न पाई जाती हो तो उस काम के करने का दोषी न कहेंगे। इसी तरह परमेश्वर काम का करने वाला भी नीयत ही से बना हुआ जा सकता है। इसी निये तीर्थ सन्ने मनुष्य का काम मया अच्छा और प्रार्थना के साथ ही होता है। अच्छे द्वारा अच्छी नीयत से जो जगत् में किया है तो उसके अपन काम में सरसस्त्री भी भरपूर होने देगी नहीं है। इसी तरह कुटिम मनुष्य जिसका काम कुटिम द्वारा से किया गया है उसमें कामयाबी बहुत कम होने देगी जानी है। इस कारण नीयत मनुष्य के मनोव्यक्त तात्पर्य पर सुयोगित उसके बाहरी कामों में जगमगानी ज्योति के साथ प्रकाशमान रहती है। नीयत कमनी है। नीयत की बरतन—मन्य की बांधी तन्वी छिद्र मिर्चनी बाय—ग्याति बराबतों में मामूम होता है। ये उन अगाधबुद्धि मन्त्रीपदम लोगों के सिद्धांत हैं जिन्होंने संसार में मनुष्य के चित्तों को सब बराया या मया है। लोगों का काम बन रहा था। ईश्वरुबिराफ से कोई जमी बुद्धिवाला जा पड़ी कि सब विगमित हो गया नहीं कोई कारण देनेवाला न रहा। ज्योगारियों में एक दैवे की माउबरी न रही बुर दिन में अंधक के समान सब और से आ घेरत जिनका कारण था सब विगमिका

१०—अधान

कहने को मनुष्य के शरीर में ५ इन्द्रियाँ हैं और यह पृथक्ता उन्हीं ५ कर्मेन्द्रियों का बना है किन्तु उन-उन इन्द्रियों का प्राबल्य केवल अपने विषय में है अथवा विषय छोड़ दूसरे के विषय में वे कुछ अधिकार नहीं रखती। जैसे कर्मेन्द्रिय का अधिकार शब्द पर है तो कान को रूप से जो नेत्र का विषय है कुछ शरोकार नहीं है। ऐसे ही नेत्र को त्वगिन्द्रिय से जिसका अधिकार स्पर्श पर है कुछ शरोकार नहीं है। नदी वस्तु देख नेत्र को न कुछ कुछ मिलता है न मुलायम को देख कुछ सूख। नासिका का विषय सुगन्धि दुर्गन्धि है शोष चार-शब्द स्पर्श रूप रस से नासिका को कोई प्रयोजन नहीं है।

पर जबान सब इन्द्रियों में इतनी प्रबल है कि यह चायका पीने के समय सिवाय रस के जो इसका प्रधान विषय है शब्द स्पर्श रूप गन्ध सबों को अपने साथ समेटती है। भोजन के समय जब भी दुर्गन्धि हो या खाना जिसे हम खा रहे हैं मग्नता हो कभी न खाना चाहेगा। खाने की क्रीन कड़े मिथसाई जाने लगेगी जो पेट में है वह भी बाहर निकल पड़ेगा। उनही ठो बात ही निघन्ती है जिन्हें दुर्गन्धि ही सुगन्धित है। हमारे साह-बान अंगरेजों के साँठ और मुँहरे बस्तरखान पर समाचम रक्षाबियों में जब तक महीनों की सड़ी मांस या मछली और पत्नीर न रखी हो तब तक लज्जत और आचना नहीं जिसकी शक्यता पाय दूर ही से नाक सड़ती है। बिठनी ही जियादह जलक हो उतना ही जियादह आकका? किन्तु सफाई को इतना अधिक अधिकार दिया गया है कि होटलिये हिन्दुस्तानी नाई भी उसी सफाई पर मोहित हो साहबों की बूटी रक्षाबियों पर मन्गी सा जा दूटते हैं। इसायची केवड़ा केसर जादि सुगन्धित इष्य एनी प्रयोजन से भोजन के पराचों में मिलाये जाते हैं जिससे उसमें सुगन्धि आ

बाप और सुयन्त्रित भोजन मामूली भोजन से समाना अधिक लाया जाता है।

यह कुछ ही बात नेत्र को जिह्वा से क्या सरोकार है। साफ और स्वच्छ परार्थ देखते ही बीम से पानी टपकने लगता है, स्वादिष्ट भोजन कच्चीक और मीठा हो तो भाव दुष्ट होने से पित्त उस पर इतना नहीं महामोद होता जितने साफ और स्वच्छ परार्थ पर जो नत्र को भावता हो। इसी तरह सर्प-मुष का सूदम अनुभव वीसा बीम कर सकती है वीसा छीर के कुछे हिस्से नहीं कर सकते। इसी से बीम का रचना यह नाम सब भाति साफक है। ईदर न करें रचना किसी की रच के अनुभव में तेज और जोबी हो। बगोटी बीम साफों क्या घाट बैठती है और हृदय उसकी नहीं बुझती। न जाने कितम सोम केवल घटोटी बीम के कारण साफ का नर जाक में मिसाय सब घाट बैठे। पुत्रा घराय एवाही घटोपपन इन चारों एवों में किसी एक का हो जाना बरबादी के छोर तक पहुँचाने के लिये काफ़ी है। ईम के कोप से जिनमें चारों है उनकी सपूनी और लियारण का मसा क्या कहना है।

सावजितेन्द्रियो न स्वाह्जितेन्द्रियकः पुमान्।
न अपद्रसनं यावत् जितं सर्वं जिते रते॥

यस तक मनुष्य जितेन्द्रिय नहीं हो सकता चाहे और सब इन्द्रियों का बच कर भी लिया हो जब तक रसना जो ज्ञान बग में नहीं किया। एक जिह्वा ने बाबू में रगकर बाकी और इन्द्रियों काबू में आ सकती है। और भी—

जिह्वपातिप्रमादिस्या जनी रसविमोहितः।
मुरमुमुक्षुत्पसद्बद्धिर्मित्तु बटिर्दीयथा॥

घटोटी बीम के कारण मनुष्य मुँह बन मछरी के समान जिह्वा के बग फूट पट हो जाता है।
जितने साफ परार्थ है उनका स्वाद या ज्ञाना जिह्वा के अपवक

से आज सर के संयोग का है। गले के पीछे उत्तरा कि स्वादिष्ट और वैतज्य
भोजन दोनों एक से हैं।

धास्वाद्यस्य हि सर्वस्य जिह्वात्वं लक्षरूपम् ।
कण्ठलाडीभ्योर्लक्षं च सर्वं कवचम समम् ॥

° किसस स्वाद्य कवचता जीम का फयदा हो सो नहीं बरन् घटीर के
बीर-और बंग की अपेक्षा इसके गुण या दोष भी सबसे अधिक प्रबल है
बड़े से बड़ा फयदा और बड़े से बड़ा गुणसान दोनों इसके द्वारा ही सम्भव
है। गाँठ का एक पैदा भी बिना बँबादे मीठी कबाल लार्डों का फयदा
सहज में कर सकती है—

“कामा का को बल हर कोयल का को देय।
पीठो बचन सुनाय के यद्य प्रपनो कर लिय ॥”

गुरुसाग भी बाहमी कर्कई वा बरबजाली से इतना उठाता है कि स
समया सिफ्तों के होते भी सोम कटुमापी मा बरबजान के पास जाते हिचक
हैं बट्टा बुलाना-सा बड़ सबी से बरबाया जाता है। कबाल को समस
सम्पता और घाइस्तभी का सारांस कहना अनुचित नहीं है। अब तक
बहुत तरकीबी संघार में हुई है उसका द्वार कबाल ही है। इन्सान और हीवा
में यही अन्तर है कि पालकर हम लोयो की तरह अपने कबाल कबाल
बहकर नहीं बचा कर सकते नहीं तो और सब इन्द्रियों के सासन-पान
में आहार भिजा भय मैथुन आदि के द्वारा पशु और मनुष्य की समता हो
में कीम-सा अन्तर बच रहा। जिस कर बसबबड रख छोड़ने का बस
बहुत दिनों के बाद निकला। प्रारम्भ में कबाल से बहना और कान
सुन जैसे माव रहना ही बहुत दिनों तक जारी रहा। जर्मों-ज्यों लोम बनि
सम्प होते नये हिन्दी की जिन्दी निवासने लगे। तब से ही सुन जो कबाल
से बहने पर फायदा घटती और बरबट्टी होती गई और उन्हें बहने हो
के कारण स्वर-ध्वनि के बाहर समस्त लोयों ने उचित के बहने पर बस
निवास और सिफ्तकर रख छोड़ने लगे।

छात्रपर्य यह कि याकबु बिद्या और ज्ञान पहले विद्या से कह कर प्रकृत न किसे पसे होते तो केवल सेख-शक्ति से कुछ न होगा न हमारी सम्यक्ता इस छोर तक पहुँचती। जबान को जबाना क्रम को दबा रखने का एक ही उपाय है। कई बार की आजमाई हुई बात है कि कौसा ही शोक जाया हो बिस्ताने के एकर भीरे-भीरे बोलो क्रम क्रम जाय ही धाम्य हो जायगा। बीम समाज को वहाँ तक सामदायक हुई सो दिखला चुके।

बस धर्म-सम्बन्ध में विद्या पर सयाम रखने की किन्तनी आवश्यकता है सो दिखलाते हैं। सब सो यों है कि बीम पर बिना कोड़ा रखे बामिष्ठों को धर्मपुरण्यर बनने का दावा करना सवपा व्यर्थ है। वह बबस्य बोखे में पड़ा है जो अपने को बमिष्ठ तो मानता है पर बीम को अपने कानू में नहीं किया। मूठ बोमना मूठी पचाही देता चुपली बदबोई इत्यादि से बचना ही बीम पर सयाम नहीं बहूमावेमा क्योंकि मूठी पचाही चुपली पाली इत्यादि बड़े-बड़े पापा का विषय निराता है। कानूनी चीजगाठी "बिमिजल सा" की नद में उसकी गिनती है और तरवार की ओर से उसके लिये दण्ड नियत है। जिस पर जाम-बुझकर धाम्य सवार होयी वही ऐसे लगे अपराधों में अपने को पँगाय बंद और जुरमाने का सजावार बनावेमा।

बल्कि जबान में सयाम से प्रयोजन गप्पी और बाबास का है जिस अपनी सपाष्टक के समय भावे-वीछ का कुछ धयात नहीं रहता न अपनी दा पउपे की हासि-साध का। जिनकी गण्य हाँवने की आदत हो गई है वे हमे अपने लिये दिस-बहूमाव मानते हैं इसमें किसी तरह एक या पाप नहीं समझते और बस उनके मण्य का विषय कुछ जला है, कोई बात नहीं रहती जिस पर वे अपने गण्य को बाद में मावे तब वे कुछ एमी बलना बिना करते हैं जिसमे हमरा को बदनाम करे, जीत उड़ावे किसी का कुछ बसंर उद्घाटन करे इत्यादि। चुप उनसे नहीं रजा जाना कुछ बरना बबस्य—

"बचमरित न बरतय्यं शतहरता हरितरी।"

मुख में जीम ईश्वर ने दी है तो कुछ कहना चाहिये। हाँ मुनिये ली
 हान की हर्ष—ऐसे सोच जिन्हें बहुत बचने का अभ्यास हो गया है अपनी
 बचपन की बोध में बहु बात कह जाते हैं जो न कहना चाहिए या जिने
 कहकर वे पीछे पछाताएँ हैं। यहाँ तक बेफायरा बचपन उन्हें पसन्द आएँ
 है कि जब तक मन मानता बक न ल जगामें नही वैसा स्थितियों में बहुत
 एसी होती है कि २४ घण्टे में कम से कम ६ घण्टे तक न सोनी उन्हें बस न
 पड़ेया। नभावों ने किसेयो इस किन्म के रहते ने कि दिनभर कही
 बघते रहें उनके किसे की तर न टूट। बधुबाने में बधुबाजो की सप
 मण्डुर हुई है। इन बकबादियों की भी कई किस्में हैं। किन्तने तो ऐसे
 हैं कि समझी जाई कोई सुनी या न सुनी उनको बक जाने से काम। किन्तने
 ऐसे हैं कि उनको बकबक का किसी ने निराहर किन्ना कि उन्हें बोल जा बाता
 है बिना लगे होते हैं। किन्तने ऐसे होते हैं कि अपनी बकबाद को रज्जिन
 और बिलबस न समझ सुनन वाले को नापसन्दीया जान बट उसमें कुछ
 ऐसा ईजाद कर देते हैं कि बोड़ी देर के लिये सबो का ध्यान उस और मुखा
 टिक हो जाता है। इसे वे एक हुनर मानते हैं और इत बद्न से बात करते
 हैं कि उनको सपसर गूठ बात सब लोग सब मान लेते हैं।
 जीम को न दबाता बनेक बुवाई और क्लेश का कारण है। महाभारत
 ऐसा सर्वनापी सप्राज इसी जीम के न दबाने की बवीतत किन्ना मया। प्रीगधी
 न बदि दुर्बोचन को बन्धे के बन्धे होते हैं इस मर्मबेधी भावम को कह मर्म
 ताइन न मिया होता और दुर्बोचन को बाण्डो से घार न रीबा हुई होती तो
 परिधाम में १८ बयीहिषी सेना जाई को बट मरठी जिसका बक्का जो
 हिन्दुस्तान को सया बस्कि वैसा मारी पात्र इसके घरीर में हो मया उषवी
 मरुमपट्टी आज तक न हो सकी। इन्ही सब कारणों में सिद्ध हुआ मनुष्य
 अपनी जीम पर बहाँ तक बनिघी कर लके और उसको दबा लके दबाई
 इन पर बौतमी रखने से बनेक घसाइयाँ हैं और स्वच्छन्द कर देने से सब
 लख की बुवाई की सम्भावना है।
 जीम को दबाता और बौरही रखने से यह प्रयोजन नहीं है कि इन

सर्वथा मूकमात्र धारण कर से किन्तु रूप रहने के भी मौके हैं। विद्याबुद्ध, वयोबुद्ध या संसार की अनेक ऊँची-नीची बातों के अनुभव में जो अपने से अधिक हैं उनके सामन धामीनता के ब्याप्त से रूप रहना होगा है विममें यह कोई न समझे कि यह छोटे मूँठ बड़ो बात कह रहा है। बहुत बड़मे बातों में फिटने ऐसे है कि बंटों तक बड़ बात है पर उनके बात बनने का काम मगनब क्या वा कुछ समझ में नहीं आता। इस तरह पर बात करनबासी की कई किम्में एक यहाँ पर गिना सखत है। एक वे है कि हुँयते जाते है बात करते जात है—'ह्यनुमूर्त्त' 'हमद्रवत्ये' इत्यादि वाक्य सासी है कि बात करने का यह नाम मूर्त्तता की पहचान है। एक सन्तुन तर्किया बाले होत है। इस सत्र का एक जुमना होमा तो ५ सत्र उनमें तर्किया बसाम के होयें। इनमें जिन्हें यात्री की सन्तुन तर्किया पड़ जाती है उनकी पिनीनी पात बात का महा अद्यह्य मानुम हापी है। एक बज्रभापी होते है। बात उनके मुख से क्या निकलती माना गात्र गिद्य। एसी की आसन होती है कि जहाँ कोई बात बनती हो तो ये बड़ी पहूँच उन बियाद देने में बसर न करेंगे।

“अतीव रोषो बटुका च धापी नरस्य चिन्हं नरकागतस्य।”

उनकी बय-भापी बटुधानी इन बात का चिन्ह है कि वे नरक संत कर भाप्य है और मर कर फिर नरक में जायेंगे। इपी के बिरह एव ऐसे भी मुरनी जन हैं जो अपनी सीटी बानी से मन गीब मंत्रे है। धन्य है वे स्वयंभापी जन इत्यादि त्रिज्ञा के सम्बन्ध में जो कुछ बलम्य या हुयने-घब कह मुनाया।

११—उपमा

उपमा एक ऐसा अलंकार है जिसकी उपयोगिता न केवल पढ़े-लिखे लोगों को होती है, बल्कि हमारी मित्य की साधारण बातचीत में भी बिना उपमा के काम नहीं चलता। उष्णदेशी के लोग जिन्हें हम विदग्ध नागरिक या ठरबियत मानता कहते हैं उनके बीच तो इस उपमा की बड़ी-बड़ी बारीकियाँ निकाली गई हैं किन्तु घायीक और बरेलू बोमबाम में भी इसका अनुसन्ध प्रयोग किया जाता है जैसे (तोर भेटौना छाड़) — (सम्भा बीठा बनूर) — (पतमा बीसा बाल) इत्यादि अँगरेजी में इस प्रकार के कथन को 'सिमिली' कहते हैं और यह साहित्य की पहिली सीढ़ी है। हमारे यहाँ के साहित्य के एकमात्र आचार और साहित्यार्थ-दर्शकार विद्वानों ने इस उपमा की नहीं तक ज्ञान की है आज हम उद्यी के सम्बन्ध में कुछ लिखना चाहते हैं।

दुष्ठी आचार्य का मत है—

उपमाकर्मोचितसावुष्मं यत्रोद्भूतं प्रतीयते।

उपमा नाम धा—विद्यी के वर्णन में वहाँ वर्णनीय की उत्कर्षता और वर्णन में समतकार देना करने वाला विद्यी प्रकार का सावुष्म विद्याया भाग यह उपमा है। इस संगापर में अपमान पंडितराज का मत है—

सावुष्मं सुम्बरं वायवमर्षोपकारकारकं उपमा।

द्योग्यं अपर्णं समतवृति जिससे चित्त में एक प्रकार का आनन्द विशेष देना ही उद्ये ऐसा जो उपसृष्ट वाक्य या वर्ण है यह उपमा है। सावुष्म धर्म पुण और जिया से सिमा जाता है।

(हंसी व बबलाकीति)

आपकी नीति हंसी के समान चलन है। यहाँ बोली में सामान्य पुण चलसता में सादृश्य दिसाया गया है।

(अंभोरुहमिच्छतां मुग्धे करतलं तव)

मुग्धे तेरा हाथ कमल के समान ताज्जबन है । यही कमल और नाबिका के हाथ की समाई साधारण बर्म में सावृत्त्य है ।

(सतीतमिदमामाति धधूर्जजधूमिध)

यह बधु दय-बधु (हृषिणी) की-सी मठखेली पाल से बनी भा रही है । यही आना इस निया में सावृत्त्य है ।

(आकाशःकास्तेऽयं त्रिबन्धुमुपय)

बन्धुमा से भूयिष्ठ आकाश सिध के समान धोमा दे रहा है । यही बिध रूप रूप से सावृत्त्य पाया जाता है ।

कभी प्रसिद्ध बात को विपर्यय उलट कर उपमा दिखाई जाती है इसे विपर्ययोपमा कहते हैं । (तबानन मिबोस्रमरविन्दमभूदिबं) तेरे मुख के समान जिला हुआ अरविन्द या । यही जिसमा बर्म पृष्ण का है जो अरविन्द (कमल) में होता है सो मुख में माना गया वह विपर्यय है । विश्वनाथ का मत है कि यह उपमा से अलग प्रतीय नाम का एक दूसरा ही बसंवार है अर्थात् जो उपमान है उसे उपमेय बना देना जैसे (स्वस्तो-चमसमं पय रविवसवृधो विब) तेरे सोचन के समान पथ है और तेरे मुख के समान चन्द्रमा है । नेत्र की उपमा कमल से और मुख की उपमा चन्द्रमा से बहुत ही जाती है सो यही जसटा निया गया । और भी ।

“यद्वसत्र समानकान्तिसतिभि मग्नं तद्विन्दीवरं मेधैरन्तरितं प्रियं तव मुखरुपं मानुषारी टाया । यत्रपि रवद्वमजानुसारिपतयतेराजहंसा यता-रावासावृत्त्यविने-वमात्रमपि मे ईवेन न छन्द्यते ।”

रामचन्द्र सीता के बियोग में कहते हैं—प्रिये तुम्हारे नेत्र की वाग्नि के समान वाग्नि रखने वाले जो कमल से जो इस वर्षाचतु के आ जान से पानी में डूब दय । तुम्हारे मुख की टाया वा अनुहार करनेवाले चन्द्रमा की बादलों से आवर टिपा निया । जो तुम्हारी सी-आन वा अनुकरण

करनेवासे इस से वे भी मानसरोवर को बने जयें। अस्तु, तुम्हारे विषये में बिच वस्तु में तुम्हारा कुछ भी सादृश्य वा उची से ही हम अपना भी बहुमाते से। ईन प्रतिकूल हो जसे भी न देख सका।

एक अन्योप्य उपमा है— 'तत्रात्मनिशोभिद्रव्यी भोजमिष ते मुखम्' तरे मुख के समान कमल खिला है और कमल के समान ठेरा मुख। अन्यण्य (पयसं पयनाकारं सावरः सापरतेषम् । रामरावणयोर्मुखं रामरावण-योरेव) । आकाश की उपमा आकाश ही है। समुद्र के बराबर का समुद्र ही है। राम और रावण का मुख राम रावण के मुख ही की उपमा ही सकटा है। और श्री—(मिरिरिव पञ्जराबीज्यं पञ्जराजइबीज्यं विभास्विविधिः निर्मर इव मरुत्तारा बरुत्तारेवास्य निर्मर इवति) ऊँचाई में यह हाथी पहाड़-सा है और यह पहाड़ हाथी-सा ऊँचा देख पड़ता है। शरने के समान इसके मद की बाध बहु रहीं हैं। इस पहाड़ से शरने हाथी के मद-से बहु रये हैं। पञ्चालोक में इस प्रकार की उपमा को अन्य-अनकार कहा है। उत्पत्तितोपमा-(व्यवसाया मुखधीरित्यस मिश्रीविकल्पनं पयोपि सायव सारवसेत्पता बुद्धविसोपमा) मेरे ही में उसके मुख की घोसा है, अग्रमा यह तरा अमण्ड करना व्यर्थ है क्योंकि वह कमल में भी है। इस उपमा को उत्प्रेक्षितोपमा कहते हैं। (कि पद्यमन्तार्ज्ज्वालि किन्ते लोकेसर्जं मुखम्) अक्षत बटास-मुग्ग यह ठेरा मुख है ना अमर को भीतर छिपाये हुए कमल का पुष्प है। यहाँ अमरप्रम्लिासि का सादृश्य कानी पुतसी से है। (पद्यं बहुरजसवत्रं क्षयोत्ताभ्यां तत्रात्मम् । तत्रात्मगपि सौत्तेक वित्तिनिम्बोवमाहमुता) पद्य और अग्रमा ठेरे मूग के समान तो हैं पर पद्य में रज अर्थात् बुमि जो फूसो में साधारण रीति पर रहती ही है और अग्रमा सयी अर्थात् पटा-बडा करता है इससे मिन्वा के मीप्य है और ठेरे मुख में पूर्वोक्त कोई दोष न होने से सर्वथा ठेरा मुख अनिश्चनीय है। इसे मिन्दो-पमा कहने हैं।

(बहुभोप्युपमव-वद्यन्वाद्य धम्मुसिरोत्तमत् । सी तुम्पी त्वम्पुले नैति ता प्रयत्तोपबोध्यते) पद्य जिससे ब्रह्मा वीरा हुये हैं और अग्रमा जिसको

महादेव ने अपने सिर पर बारण किया है जो तेरे मुख के समुद्र हैं तो तेरे मुख की कहीं तक प्रसंघा की जाय । इसे प्रसंघोपमा कहते हैं ।

(अतपत्रं शरणाग्रस्तबभानमितिप्रयं । परस्पर विरोधीति सा विरोधोपमा मत्ता) कमल शरणा की पुत्रो का बाँध और तेरा मुख ये तीनों परस्पर एक दूसरे के साथ होड़ करते हुए आपस में एक दूसरे के विरोधी हैं—इसे विरोधोपमा कहते हैं ।

(नखात् सन्निरिण्योस्ते मुपेन प्रतिपबिणु । कर्माकरो ब्रह्मस्येति प्रतिषेधोपमेवता)

कर्सकी और बड़ बन्मा को तेरे मुख के साथ होड़ करने की मत्ता क्या सामर्थ्य है । इसे प्रतिषेधोपमा कहते हैं ।

(आरुष्यं सरोजासि बचनीयमिदं भुवि । अज्ञाकस्तव वरत्रेण पामरैकपमीयते)

हे कमल क समान नेत्रवासी इस बात को सुनकर कि पामर लोग सब जान बाह्य पक्षी के शिखाब पर बन्मा को तेरे मुख के साथ बराबर करते हैं । इसमें भी वही पहल नहीं हुई जगों का सब तात्पर्य है ।

(न यद्य मुखमेवेदं न भु गीबलुपोहमे) यहाँ यह पद्य नहीं किन्तु मुख है । यह गृह्य नहीं बल्कि नम है । सत्य जान को बन्मा कर सविह दूर करता है इसमें इसका नाम तत्त्वान्याय उपमा है ।

(कान्वा अत्रमत्तं घाम्ना सूर्यधर्येण चार्थं । रात्रप्रलुङ्करोपीति सैय हेनुपमा मत्ता)

हे राजा तुम शरीर की कान्ति के कारण बन्मा का नेत्र और प्रकाश के कारण सूर्य का और सन्नीरता के कारण समुद्र का अनुकरण करते हो । इन हेनुपमा या कारणोपमा कहने हैं ।

(बासेबोचान मातेर्यं साज कानन शोभिनी) मानवृश के (मानन) बन से शोभायमान दूसरे पद्य में अन्तर् मरिच (मानन) मुख से शोभायमान

प्रजापतिप्रार्थनास्तं स्वाधीनपतिना यथा ॥
 सैर्मममायेषु सुधारसम्पदा तुपुरकपूर्ववत्तास्त्रिधावुद्योः।
 बनीरकपीर्ममसां धारीरिणी प्रामोदरी लोचनपौधरंपदा।
 तस्य कुमुदनाभेन कामिनीयच्छपायुता।
 नेत्रामन्येन चक्ष्रेण साक्षेन्द्रोदियत्तंभुता ॥

इन श्लोकों में अगर कहीं भाँति भाँति की उपमा पाई जाती है, उचित
 उन बिना संसृष्ट से परिचय है जान लेंगे। केवल माया जाननेवालों को
 इस लेख के पढ़ने में ऊँच और बरफि होगी इससे उनसे प्रार्थना है कि समा
 करे और यदि मन तथा के पहले तो निर्भर कर सकेंगे कि हमारी कार्य-माया
 और दूधरी-दूधरी मायाओं में क्या अन्तर है। निश्चय जानिये सर्व
 पारधी के सावरो को तथा अंगरेजी माया के कवियों के खाल में ऐसी
 अप्पुठ बनोधी बालुपी कमी नहीं आई। यह पत्र ही निघमा है ऐसी
 किन्ती को सूझी ही नहीं।

१२—रुचि

कोई काम हो उसकी तरह पर कभी नहीं होना जब तक उस काम में रुचि न हो। पीठा में भगवान् कृष्णचन्द्र ने कहा भी है—

बिना थडा बर्षात् रुचि के जब तप दान हवन आदि जो किया जाता है, सब व्यर्थ है—करना न करना दोनों एक-सा है न परलोक में उसका कुछ फल मिलता है, न इसी लोक में उस काम को कोई तारीफ़ करता है। शास्त्रवालों ने विधिपूर्वक या विधिबन्धु पर बड़ा जोर दिया है। सब पूछी तो रुचि या थडा से किसी काम का करना ही विधि है क्योंकि विधि तभी हो सकती है जब मन में हमारे उस काम की ओर रुचि है। ध्यान समाधि देखिये तो मनुष्य जन्मते ही रुचि में बसत देने लगता है मार्गों रुचि उसकी बासी या अरकरीर लौड़ी हो बच्चे को माँ के दूध के एबक माय या बकरी का दूध पीपी या दर्द के क्यहे में दिया जाता है तो वह उसको एसी रुचि से नहीं पीता जैसा माँ का दूध। ऐस ही माँ की मोर के बरसे उसे पालने या चारपाई पर सुना बो तो कबाबिन् दस में हा-एक ऐसे होंये जिसकी बिना रोये-माये कुजी से उस पर लेटे रहना देखना। फिर क्यों-क्यों उमर में वह बड़ता जाता है, अपने हर एक काम जाना पीना सीना ओड़ना पहिनना खेत-कूर, पड़ना लिखना आदि में रुचि को जगह देना जाता है।

रुचि ही के नूने-नूदे प्रकाशन्तर या उसकी बायीकियाँ कँदन के नाम से जान बड़े हैं इस नई सम्यता के जमाने में जिसकी हर स जियादह जान-बीन हो रही है। अग और इगनेद सपिष मालदार सम्य देरी में जिसकी यदा तक उन्नति है कि सुनठे है इगनेद में अमीर बचनो की लेदियों के लिये दिन में तीन बार परिम स उनक पायाक आदि बेग भूया का नमूना जामा करता है। ईने ही हव मोय भी बनने जाने-पीन में रुचि की बायीकियाँ

को बेहद बढ़ाये हुये हैं। कोई कहते हैं हम नहीं जानते सोमों को रोटी खाना कैसे पसन्द आता है। इनको तो सोमो जून राजी-राजी मुपुई और बेडनी मिमली जाय तो कभी कभी रघोई का नाम म सें। दूसरे कहते हैं, तुम्हारी भी क्या ही रधि है? मुपुई-धी सकीन बीज तुम्हें कैसे बचती है कभी नहीं बिना कभी रघोई जाये भी भरता है। हमारे हिन्दुत्वान में कभी रघोई का तरीका ऐसा बढिया रक्खा गया है कि अगर एकल्लुठ को बीका दिया जाय तो इकीकत में रघोई रसायन हो जाती है। एक तीसरे बोल उठे यह तो अपनी-अपनी रधि की बात है। पर मेरी राम तो यह है कि पाना मुसलमान बहुत अच्छा पकाते हैं, सुसुयन दोस्त की किस्में। इस पर कोई कंट्रीबास नहीं पर बीठे बे बोल उठे—हरे-हरे तुम्हारी रधि कधी है हम नहीं कह सकते। हमको तो मांस भीजन का नाम जून मिच-नाई जाने समती है। आपने हमारे पोषाणमन्त्रि की खबबुवार बसोबी पोहनवास और दूसरे-दूसरे छपन प्रकार के मोय का महाप्रसाद मानूम डोना है कभी बीज से भी नहीं देता नहीं तो मुसलमानों के भीजन को कभी न सचहते ?

ऐसे ही पेय वस्तु में भी रधि का टाय बढ़ाती है। बीमा हम उसे कहेंगे जो बिना बीतों की सहायता के केवल बीम और तामु द्वारा इनक के भीतर पाठा है। परन्तु रस के ज्ञान में रसना जबतू बीम का अधिक सम्बन्ध है तो बही रधि की सप्ताह भी जाती है। पेय पदार्थों में सबसे पहले पानी है जिसको 'बीचन' नामे पौ कहते हैं—परतु और बरम्भ-जतु को डीङ्कर और नहीनों में नदी का पानी पीने योग्य है।

“पानीयं वाजीयं सरदि बरामे च पानीयम्।

नारेबं नारेयं चारि बरामे च नारेयम्॥”

कोई कहता है हम तो सदा ताजा पानी पीते हैं और इसके संकरो कयदा बनता है। दूसर कहते हैं हम तो कम्पे में भी डंडा पानी पीते हैं और तारियमें में तो बिना बरं प्याम कुम्भी ही नहीं। कम्पे में एक

अंगरेजी पढ़े बहाँ बैठे थे बोलते—आपको मामूम नहीं किन्तु निहायत
 बायीक कीड़े पानी में रहते हैं। इसलिये इसे छान लेना बहुत जरूरी है।
 मिठा भी है—

“बस्त्रपूर्त विवेकसम्”।

मेने तो एक फिमटर लरीवा है उसी में छान बिस्पीर ग्वास में पानी
 पीता हूँ। बर्फ के साथ पीने के ग्वास में पानी रख पीने में बड़ा मजा मिलता
 है। इतने में एक बीने साइब बोन उठे—हमसे ये सब छटपट्य मासूम होता
 है। यहाँ तो परा परा फफलाबाबी पमन्व आता है। प्वास ने सहाया तो
 दो आले फेंक दिये छोटावाटर का बोनम मूँह में लगाया धट्ट-धट्ट उगार गय
 कमेजा तर हो गया। इनने में एक पाँचमें माहब जो बहाँ मौजूब थे कहने
 लगे—हे भयवान् ! धर्म के बज तुम्ही रसाक हो। म जानिये कंसा समय
 आया है कि अंगरेजी पत्र-पत्र लोग भ्रष्ट हो जाने हैं। अपने तो कंमी ही प्वास
 मगी हो बिना चरभोरक मिमायें जस कभी नहीं पीते।

अब मोने को सीखिये। पमेरियोँ सटमल से लगे हुई टूटी छोट से
 ने लमरा पमंग ईजी-बयर और कोष तक न जानिये किन्तु पटपल रहे
 पये हैं। सो सब इग रबि ही के भांति भांति के ईबार है। अपने पर भी
 जब नीद का शॉरा आता है तब यह रबि यहाँ तक बेहवा बन जाती है
 कि कबड़ पर भी सोये तो पगमसी कोष का मजा मिलता है।

“निशानुराधा न च भूमिदाया”।

उमें भी खिही मोनेबागे समदूम पाये जाने हैं कि पमडे-बसने मोने
 हैं गाने-गाने मोने हैं बागबीन करने में एक बाग मुँह से निकली तो हमारे
 में अन्धधनि हो गये।

अब पटनावे बी सीखिये। लोग बहन से यहाँ क सोय पर है कंसा
 मगी जानन। पर यहाँ समय के समय लगर-गिर मोहर्ते मिगार के ऊपर
 मिग मये हैं। यहाँ क अमगितन रिस्म के पागल और आमूगल नुरी

भट्ट-निबन्धावली

सुदी वधि के अनुकूल गिरने लयें तो बड़ी बड़ी न चाहिये बरन् दिन का दिन समाप्त हो जाय। तो सब देर तक पड़ने वालों को इस वधि के संवर काम में फँसाय रखना और किसी कुसरे लेख के पड़ने से बर्धित रखना है इसलिये इस सिंघापे को सब बन्द कर छोड़ते हैं। पड़नेवालों की वधि के अनुकूल फिर कभी निकालेंगे।

१३—लौ लगी रहे

लौ लगी रहे तो कठिन से कठिन और बुज्जर से बुज्जर नाम सहज से सहज और सुकर है, दुर्लभ मुमन असाध्य सुसाध्य है। यही तब कि पई का पथ और पर्वत का पई हो जाना कोई बड़ी बात नहीं है पर लौ लगी रहे। किन्तु लौ का समय ही तो कठिन है। सच्ची लौ लगे तो संसार के शत्रु पदार्थों की प्राप्ति तो कुछ हुई नहीं बल्कि इन्द्रियातीत जो वैशुल और फरिस्तों को नहीं मिला वह बनायास विभ सफ़टा है। सच्ची लौ लगी तो जिसमें लौ लय जाती है वह जल पल बढ़ बेतन आकाश पाताम तब ठीर सबों में बही-बही सुमता है। प्रह्लाद और नृसिंह का इतिहास इसका पूरा उदाहरण है। जिसको जिसमें लौ लयती है उसको विद्या उस पदार्थ के और सब कीबा मालूम होता है उस रस केवल उसी में मिलता है। विद्यार्थी को विद्या में लौ लगी तो एक-एक धम लौ धर्म बीतते उसे बड़ा अकरास बुझरता है। इसी से कहा है—“कि क्षपस्य बुतो विद्या”। बुध को पल जोड़ने में सब लगी तो एक पूटी शंती लौ लरब करते या किसी को बेते बहुत मकरता है—

‘सपराः कपरात्वेव विद्यावर्षे च विस्तपत्।
कि क्षपस्य बुतो विद्या कि कपराय बुतो पनम्॥”

प्रेमी को अपने प्रेमपाथ में लौ लगी तो वह लामी आधिर तब मर सब पनीहृत और दुर्लभ सहा यही तब कि सौरा बीबता पन जाता है। बेरामी का जामा पहिने हुये लौ लयने के लगे में बुर-बुर लमी लो लारा टने क पीबन तब से हाथ लो बीटना है। लीये के रसों में लौ लयने का बहूत धरणा विन लीबा गया है—

लिया तब उसके लिये विनाम उपास्य देव के और कीम अमतिक का प्रति और धरम देनेवाला हो सकता है। समस्त इरम अमत् चाहे अभी उच्छिन्न हो जाय या इस मर्त्यलोक के क्रीटानुक्रीट स्वर्गवासी अमरप्य देवताओं के ऊपर का दरजा प्राप्त कर लें उपासक के धरम कीमल मुग्ध मन में इसका कुछ भी असर नहीं होता। इस बाह्य-अमत् के बनने या बिगड़ने से उसे कोई सरोकार नहीं यदि उसके उपास्य प्रभु का उससे कोई लगाव नहीं।

बड़े-बड़े अन्नबर्ती राज्यो का अन्न-पाठ तथा तुच्छातितुच्छ धनधर्मों का सांसारिक वैभव के ऊँचे सिद्धर पर अहमा बड़े-बड़े राजनीतिज्ञ जिसपर न जागिये क्या-क्या तूमर बाँध लयासी-मुलाज पकामा करते हैं वे वे बट नाएँ जिनकी बुनियाद पर मुस्ल या कीम का बनना-बिगड़ना जा टिकता है उनसे अपने प्रभ की सेवा-टहल में मौलान उपासक को कोई प्रयोजन नहीं जिनका मन्बर हमारे देस में इतना अधिक है और मजहबी जोष इतना बडा है कि इस मौलान के अमाने में कोसिद्य करने पर भी मुस्ली जोष की और हमारी मुकाबट होती ही नहीं। भक्ति-मार्ग जो अमृत तुस्य है इस समय हमारे लिए अडर का व्याजा हो रहा है। स्वर्ग की सीढी हाथ लगती है एक ही उछाल में इन्त्र के बाधे बासन पर का बिराजोने— इस अद्भुतबाध के बडाने इनसे जो चाहो सो करा लो जो चाहो सो लो लो लमी इनकार न करीगे। कोई मुस्ली मामिले जिसमें मजहब या परोस का बखल न हो कभी उसमें ये प्रवृत्त न होंगे।

अस्तु ली लगी रहै—उपकारी को परोपकार की ली लगी है उस को इमरों की बुराई ईदमें और पीड़ा पहुँचाने की ली लगी है सरकार को अपना राब की सीमा बडाने की ली लगी है उस को हिन्दुस्तान की ली लगी है। हमारी ली लगी है कि किसी उधारबिध और पूर्य के मन में जा पाठी हम अपना मिज का प्रेस कर लेते पत्र बिरसाम्यी हो जाता पुर भी की ली लगी है वहाँ तक नेता मुझे मुकते रहै और पन्च बडाते जाय। पादरी छाहबो की ली लगी है कि उस-बस-कस जिस उपाध से बनी हिन्दु-स्तान के लोनों का ईसाई करते रहै, जिसमें बिलायत के बड़े-बड़े बेरिटी-

फंड को नूटने का सुमीता रहे हमारी कारगुजारी उत-उत फंड के प्रबान
 भोमों की निवाह में जैवती रहे । बह्यास्मि कहने वालों की ली लगी है कि
 हमी निर्वाचन-सद पा जाय और जम्म-भरण के कसेय से मुक्त हों । इसनिये
 कि जब हम बह्य हो गये और वह बजम्मा है तब जनन-भरण फिर कैसा ।
 बह्यास्मि वाले जिभका मनोनाथ हबस का बुझा देना मुख्य उद्देश्य है के
 भी हम ली लपने की डोर से कसे हुए है । तब हम भोग जिम्हें हबम एक
 बम के लिये नहीं छोड़ती और आशापाव-सर्वबद्ध काम जोम-परामग हो
 रहे हैं पगकी क्या ? अंतर केबस इनका ही है कि जो भसे हैं उन्हें मनाई
 की ओर ली लगती है बुरों को बुराई की आर । मादमी का बोना पाय
 जिसे किसी में ली म लयी उसका जम्म ही स्वर्ग है ।

सितम्बर, १९०३

लिया तब उसके निये सिवाय उपास्य देव के और कौन अगणिक का प्रति-
 बौर धारण होनेवाला हो सकता है। समस्त बुध्न कथप् चाहे सभी उच्छिन्न
 हो जाय या इस मर्त्यलोक के कौटानुकौट स्वर्गवासी अमरप्य देवताओं के
 ऊपर का दरबा प्राप्त कर से उपासक के धरत कोमस मुग्ध मन में इतना
 कुछ भी बसर नहीं होता। इस बाह्य-कथप् के बनने या बिगड़ने से उते
 कोई सरोकार नहीं बकि उसके उपास्य प्रभु का उरसे कोई लगाव नहीं।

बड़े-बड़े ब्रह्मर्षी राम्यो का अथपात तथा तुच्छातिगुच्छ बनसमूहों
 का सांसारिक बीमब के उँके शिखर पर बरना बड़े-बड़े राजनीतिज्ञ जिसपर
 न जानिये क्या-क्या तुमार बाँध लयासी-पुलाव पकाया करते हैं, वे वे बट
 नाएँ जिनकी बुनियाद पर मुस्क या कौम का बनना-बिगड़ना का टिकठा
 है उनसे अपने प्रम की सेवा-टहस में सीलीन उपासक को कोई प्रयोजन
 नहीं जिनका लम्बर हमारे देस में इतना अधिक है और मजहबी बोध
 इतना बडा है कि इस तालीम के बमाने में कोशिय करने पर भी मुल्की
 बोध की ओर हमारी भुनावट होती ही नहीं। मक्ति-मार्ग जो अमृत
 तुम्स है इस समय हमारे लिए बहर का प्याला हो रहा है। स्वर्ग की सीन्नी
 हाव सपती है एक ही उछास में इन्द्र के बाबे भासन पर का बिराजोने—
 इत अदृष्टबाब के बहाने हमसे जो चाहो सो क्य सो जो चाहो सो सी लो
 बभी इतकार न करिये। कोई मुल्की मामिले जिसमें मजहब या परेस का
 बसल न हो बभी उसमें से प्रबुध न होंने।

बानु ली सभी रई—उपकारी को परेपकार की ली सभी है
 सल को बुररो की बुराई बुँडने और पीका पहुँचाने की ली लगी है सरकार
 को अपने राज की सीमा बहाने की ली सपी है एत को हिन्दुस्तान की ली
 लपी है। हमारी ली लगी है कि बिची उदारचित्त और पुरप के मन में
 का पाठी हम अपना निज का प्रेस कर लने पब बिरस्वामी ही पाठा
 पुर जी की ली लपी है बहाँ तक बेला मुई मुड़ते रई और पन्ब बहाते जाँय।
 पावरी छात्रकी की ली लपी है कि छल-बस-बस जिस उपाय से बनी हिन्दु-
 ग्नाय के लीपा की रईसाई करते रई, जिसमें बिलायत के बड़े-बड़े बेरिदी

छंड को मूटने का सुभीठा रहे हमारी कारगुजारी उल-उल छंड के प्रबल लोमों की निपाह में खँबती रहे । ब्रह्मास्मि कहने वालों की ली सपी है कि हमी निर्वाण-यद पा जाय और जन्म-मरण के चलेस से मुक्त हों । इसलिये कि जब हम ब्रह्म हो गये और बह् जगन्मा है तब जनम-मरण फिर कैसा । ब्रह्मास्मि वाले जिनका मनोलाघ हबस का बुझा देना मुख्य उद्देश्य है वे भी इस ली लपने की ओर से कसे हुए है । तब हम सोच जिन्हें हबस एक बम के लिये नहीं छोड़ती और बासापास-घर्तबंद काम-बोध-परामथ हो रहे है उनकी क्या ? अंतर केवल इतना ही है कि जो मरे है उन्हें मलाई की मार ली समठी है बुरों को बुराई की ओर । आशमी का बोला पाय जिसे किसी में ली न सपी उसका जगम ही व्यर्थ है ।

दिसम्बर, १९०३

१४—नाम में नई कल्पना

बाबरीदीन मसुरियादीन गवादीन बुर्गदीन छीतलादीन माता-
दीन मतवातदीन बापि बीतवाले नामों की हीन रचा पर हमें भी एक नई
कल्पना सूझती है 'अकिस अजीरत दीन'। नाम जैसे होने चाहिये वो
पहिले कहीं पर हम लिख चुके हैं। जान इस विषय को प्रसंग प्राप्त देख
पिप्ट-येपक की भाँति फिर इस पर कुछ कहा चाहते हैं।

नामकरण भी देश या जाति की तरफकी ही कर्तौटी है जिस जाति
में तरफकी रहती है उस जाति में नाम भी उतने ही पिप्ट-संप्रदाय के रखे
जाते हैं। हम लोग जैसे और बाँटों में पीछे हटे हैं जैसे ही नाम बदलने में
भी। नाम के मुलते ही किसी बराने या जाति के बुद्धि-बैभव की पूरी
परत हा जाती है। बगदोसी भारत के और-और प्राप्तवासों की अपेक्षा
वहाँ तक जाय बड़ है और फिटला अधिक बुद्धि का विस्तार इनमें है यह
उमके करव रसायन कोमल पवाकसी-सपुटित नामों ही से सुश्रित होता

है। वही हम लोग वहाँ तक बुद्धि-विस्तार में रहित हो रहे हैं यह हम
सोग के छपा मुसा कस्मू मुबकू बिबर बापि नामों से प्रगट है बरतू
इसी बुद्धि की रहितता ने हम लोगों में एक लयास देवा कर रक्खा है कि
पितीला नाम रखने से पासक बिगजीबी होता है। इसी बुनियाद पर ननकू,
मनर बरकू पनितू, मुनमुन बुसबुस पनम्सू सहसू भोपत भोगू, छोगू,
नितकीड़ी बमड़ी छदामी जानि बनर्दस कर्बकट पितील नाम रत दिने
जाते हैं। नितस कर्ह ? अनिल का अजीरत और समझरापी का बीहर तो
है। इसी जीहर में नाम ही का क्या हमापी न जातिपे नितनी बापों को
अपनी पूती में कर रक्ता है। जैम सिरपा पदाने-लिप्याने से पूननी-कपती
नहीं। महान तप और बामुलबार-बचिउ हो तो उसमें रहने वाले तथा
आ— गिर प्रसन्न रह कल्पने-कल्पते हैं। ऐसी ही समझ ने जैय को देश

में टिक जाने के लिए महायज्ञ की है। पन्द्र और तंय पक्षान में कबूतरों की शबली की मति सिद्ध-सिद्धाय के रह्ये पीले आम से जर्द पड़ गये बसा से फूलते-फूलत तो प्रायम। किसे कहें? दन यदंलोरा क फूलने-पमने से क्या फायदा ?

मारबाड़ी और बिस्ती आगरा के गणियों के नाम में बहुधा मस मसा रहता है। जिनके नाम में मस है तो उनके काम में कहीं तक मस न हुआ ? मण्युर्ण अमिचानाबमी बड़ी-बड़ी भुगत और विषयानरियों को छान आसो मिट्टूमस बड़ी न पाओय। कोई-काई जिनमें तरहदारी की बु जा गई है अपन सड़ना का नाम काष्ठिया बन्दी के साथ रखत है जैसे छुनु मुनु मापो माओ सोहन मोहन रतन जतन सह मह्, सोंधू मोंडू और मड़ियों का रम्मो सम्मो छमो मुमा बुम्नो मुम्ना इत्यादि। पुराने बरें को छोड़ कोई बात निजासना हमने सीसा ही नहीं तब नामकरण में क्या बर्रा कहीं स राबें ? अरजदास रामदास गनेसदास आदि बहुधा एक ही नाम के एक मुहने में बीसा पाय जाते हैं। न जानिये क्यों हकको इन नामों पर जानवाई जाती है। उममें भी कुछ फर्क नहीं नाच जाति कैसी-जुंजबा या माय रक्तमें कहीं डेब जाति बास बाह्य-शरी भी। पुरवों के नाम में महानेब नापयथ राम और गिणियों में वंया यमुना पार्वती मधमी तुलसा। छोटे से छोटे घर में एक-एक नाम के हवार पाय जाते हैं। बही बग देणियों में रिणियों के नाम जैसे मरम और मनीज रखने जात है जैसे कामिनी निम्नारिणी बिम्ब-बिमाहिनी कादम्बिनी मुषामिनी सरोजनी कुमुदनी बलिनी धीरादवागिनी मुनेची उर्बेची पाणिमुची स्वर्णबन्दी इत्यादि। हम मागा में जुम्मी वया भया बठस्मी इत्यादि। फिर गृह्णियन कुमबन्दी और देव्याओं क नाम में बोर अन्तर नहीं रहता। बनावम में जानकी मारबनी मन्दी कमला आदि नाम देव्याया के हैं।

ममागाना का हम अपन न ठंठा ममन्त है पर नाम मगत में ये ह्मण किनी छरुत हैं। पानिमा आदगा जैब मग्दिय आदि देविया के ना

बेस्याओं के न पान्चोमे । बंधबेसियो की मांति चन्द्रनामा बिलासिनी कामिनी मोहिनी उम्पादिनी स्वर्णलता मातली कामबुरा बसन्तवेना पिक्वैनी मेनका तिमोत्तमा आदि रखे जाय तो कौन-सी हाति पर पुइस्य और भसे मानुषों को जब इसका क्याम नहीं तो बेस्याओं को क्यों हो ? किठने बुधप्रस नाम न जागिये किस जसूम पर रखे जाते हैं न नर न मावा जैसे राधाकृष्ण सीताराम श्रीरघुंकर इत्यादि । इस तरह के नामवाओं को क्या समझें ? स्त्री या पुरुष दोनों एक साथ हो नहीं सकते । किठने अपने नाम से आगे हिन्दू है आगे मुसलमान जैसे राममुत्तम राम-बसु कुंभरबहादुर । किठने जग्ये तो हिन्दू के घर पर नाम से मुसलमान ही रहे जैसे रामबहादुर, अमीर बहादुर, नबाबबहादुर, बक़्कबहादुर । हमारे कायस्थ महाछ्यों में इस तरह के यवन-सम्पर्क-रूपित नाम बहुत मिलते हैं ।

मक्ति की भावना में भी हम लोमो के नामों की सूख ही आक उड़ाई है । अपने इष्ट-शैव के नाम के अन्त में शील या बास का पद लगा दिया जाता है । न जागिये किस पून कैंठी सरस्वती मुख से निकल पड़ती है । कहते-कहते अन्त में शील और दास हो ही तो पये । काम में बास तो नाम में क्यों न हों ? महेंद्र उगेन्द्र गुरेन्द्र बजेन्द्र नरेन्द्र आदि प्रमुठापाषी नाम क्यों रखायें जायें ? दास्यर्य तो नच-नच में समाया है । यगु ने बासाय नाम पूर और हीन जाति के लिये कहा है । चारदस विष्णुमिष पुरिषबा यज्ञरता सुमति सत्यसेन कामपाल नाम तो जब अपने के ज्ञयात हो गये । जब तो ।

“श्रीश्री के घर घरमहात हैं बाम्भूत पूत मचापी ।”

हमापी पुरानी मती बाग सभी मुख हो गईं जब नाम ही की क्या ! बहुबा ये दाम और शील नामवाले नाक तुलाय-मुत्तम कही नच से सिद्ध तक नर में त्रिषयें हिन्दुमानी होने की बासना भी न पाई जाय ईपसी चाइय ही सम्यगा के धिरमीर बगते हैं, पर उनके नाम से प्रकट ही जाता

है कि जिस कुल को उन्होंने अपने जन्म-ग्रहण से कर्म्य कर डाला उस बचने में सम्पदा का कहीं तक प्रकाश था। सच है—

“मूर्खं पुत्रस्तु पण्डितं तृणवन्मम्यते जगत्” इत्यादि नाम के सम्बन्ध में बड़े से बड़ा आस्था गाने पर भी न चुकेगा।

घरतुबर, १९०५

वैश्याओं के न पाओगे। बंधवैश्यों की भाँति बन्धुवामा विभाषिनी कामिनी मोहिनी जम्पादिनी स्वर्णसता मामती कामबुध बसन्तसेना पिकर्षिनी येनका विभोचमा आदि रखे जाय तो कौन-सी हाति पर गृहस्थ और भसे मानुषों को अब इसका क्याल नहीं तो वैश्याओं को क्यों हो? किन्तु मुखमत्त नाम न आगिये किस उत्तम पर रखे जाते हैं न नर न माया जैसे राधाकृष्ण सीताराम श्रीरैसकर इत्यादि। इस तरह के नामवालों को क्या समझे? एनी या पुत्र्य बोलों एक साथ हो नहीं सकते। किन्तु अपने नाम से आगे हिन्दू हैं आगे मुसलमान जैसे रामगुलाम राम-बसन्त कुँवरबहादुर। किन्तु अपने नामों तो हिन्दू के घर पर नाम से मुसलमान ही रहे जैसे रामबहादुर अमीर बहादुर, मन्नाबहादुर, बसन्तबहादुर। हमारे कायस्थ महाशयों में इस तरह के यवन-सम्पर्क-रूपित नाम बहुत मिलते हैं।

मल्लि की भावना ने भी हम सोचो के नामों की खूब ही जाक उड़ाई है। अपने इष्ट-देव के नाम के अन्त में बीज या बाध का पद मया दिया जाता है। न आगिये किस कुल कौन सी घरस्वती मुख से निकल पकटी है। नरै-कहते अन्त में बीज और बाध हो ही तो क्या। काम में बाध तो नाम में क्यों न हों? महेश्वर उपेन्द्र गुरेश्वर बजेश्वर नरेश्वर आदि प्रमुठाजानी नाम क्यों रजामें जायें? बावत्त तों नच-नच में समाना है। मनु ने बाधान्त नाम पूत्र और हीन जाति के लिये कहा है। आरवत्त विष्णुमित्र मूरियबा यज्ञवत्त सुमति घरवत्त कामपाल नाम तो अब अपने के जपाल हो क्या। अब तो।

“श्रीबी के घर बरमबात है बाम्भून पूत मवारी।”

हमारी पुरानी मनी बाग नमी मूठ हो पाई ठक नाम ही की क्या। बहुधा ये बाग और दीग नामवाले नाम पुमाय-पुमाय कही नल से सिद्ध तरु मर में त्रिममें हिन्दुलानी होने की बाधना भी न पाई जाय ईपनी-साइग ही तन्मया के शिरपीर बनने हैं, पर उनके नाम से प्रकट ही जाता

है कि जिस कुल को उन्होंने अपने जन्म-ग्रहण से कर्तव्य कर जामा उस बराने में सम्झना का कहीं तक प्रकाश था। सच है—

“मूर्खं पुत्रस्तु पण्डितं तु न ब्रह्मण्यते जगत्” इत्यादि नाम के सम्बन्ध में कोई से बड़ा आस्था पाने पर भी न बुकेमा।

मयटूर, १९०२

१५—बड़ों के पदे होस्सिंले

हमारे यहाँ के बच्चकारों ने तुप्पा को पिछाभी कहा है और निश्चय कर गये हैं कि इसका अन्त कभी होता नहीं बरन् इसका अन्त होना ही सुख की सीमा है। हम यह बिलामा चाहते हैं कि यह उनकी भूमि है, सुख की सीमा चाहे हो या न हो पर तुप्पा का दाय हो जाता है। रखा इतना कि जो बेचारे हकीर छोटे लोग हैं उनकी तुप्पा भी बड़ी छोटी दूध बाक-दूध की समीचीनी बात की बात में भूमि जा सकती है किन्तु जो बड़े लोग कहनाते हैं जन्मों बक्यम के अनुसार सभी बात बड़ी होती है।

“सर्व हि माता ब्रह्म।”

उस हीसिंसे के नाम से तुप्पा भी उनकी बहुत बड़ी होती चाहिए जो बोड़े में कभी बुझती ही नहीं। आसमान के तातमें वह या बसन्त हीसिंसे बड़ा परिन्द भी पर सही मार सकत बोड़े में क्या बुझ सकते हैं? इती से लोगों ने सिद्धान्त कर लिया है कि तुप्पा का दाय हूँ नहीं। किन्तु यह सिद्धान्त उनका क्या भूम से पाली नहीं है? बिचार की कसौटी पर कठने से चित्त दग स्वीकार नहीं करता कि तुप्पा का अन्त हुई नहीं। ही बड़े और छोटे लोगों की तुप्पा में फरक असबला होता है।

हम हिन्दुस्तानिया की छोटी बुद्धि छोटी समझ छोटी बाकफियत छोटी हीसिंसे ! उस हमारी तुप्पा भी मितान्त छोटी हुआ चाहे। पद-निस बस-बीम की नीकरी वा पदे अपने को इतकरय मान बैठे और जो बड़ी मी-नबाग के हट-बसर्क इम्पेक्टर, तहसीलदार, डिप्टी या सरर बमीन कर दिय गये तो फिर क्या भावबानी के ओर-ओर की पहुँच गये मुल की सीमा न पार हो गये। ही उनकी तुप्पा के दाय में बेचक तरदु

बा पढ़ता हूँ या हर तरह पर बलम्ब समझे मये हूँ बकिस में बुसन्द राइ-
 म्पयी और मम्पता में बलम्ब तागत में बलम्ब इतिपत्रक और एवा में
 बलम्ब तबियतबारी में ईमान की छिपावट में ऊँच ईमानवारी में बलम्ब
 तब हीसिला भी उनका बलम्ब होना ही चाहिये । अब तक छोटे हाकिम
 बंट से सेप्टिनेष्ट न हों वृष्णा का अन्त होठा ही नहीं । हम सोय राम-
 बहादुर, सी० एच० आई० या राजा कर दिये मये हीसिला पूरा हो गया ।
 बिनाइत के पाही मालगज वाले जो माई या दर्भ कहमाने हूँ उनके ऊँचि
 हीसिले का अन्त तब तक नहीं होला अब तक प्राइम मिनिस्टर बरीर
 बाइर या बुच मियाह-मुईद के मातिक महारानी के प्रतिनिधि हिन्दुस्तान
 के एवर्नर जेनरल न कर दिये जाय । हिन्दुस्तानी फौजी अफसर फौज
 में भी-मवा-भी की कोई मीसरी पा जाने ही में सल्लुष्ट हूँ उनका हीसिला
 अम्नी बसन्दी के छोर को पढ़ेब जाना है । बही बिनाम्नी फौज के अफसर
 अब तक बसेइर-इन-बीच न हो उनका हीसिला पूरा नहीं होला ।

हमारे देस के रुपये बानों के हीसिल का अन्त इनम ही से है कि बर
 बने बाँच माना बार पाई का ब्याज मियना रहे डेन्डी के बाहर पाँच न
 एगना पड़े । बिनी बड़ बारगाने में ब्यदा सगा देन मे परना एँमान पर
 ब्याज का पाटा ता सबके पशिल है उरगन्त बाम न बना ता पूबी मे भी
 हाब जाना पड़या । बिनाइत बाल एक सगा बी पूबी मे अब तक इस माग
 का बोई बाम न करें उनका हीसिला धाना ही नहा एगवेड अमरीता
 हिन्दुस्तान थीन मय का एब बिष है । बिनी एब बाम में कुछ घोड़ा
 का बुबसात महला पड़ा ता घुसरे में एक का बाम गुना बर माना-नाम
 हा मये । बम-हिम्मनी की निषानी ब्याज का पाटा हमार ममान बिषाय
 बाने भी देगने ता इसरी ब्याज-दिन तरवरी के त्रिग यार-छोर को
 पढ़ेबा हुमा है बभी न पढ़ेपना । मन्नी एब प्राय म मिमिन्-मिमिन् जा
 बिनाइत का अम्नी बाममूमि बर रही है बाँच का बभी बानी ? बनी
 हमार यरी रोजगारिया के अन्नाट का अन्त बेउग एतन म हा है बि बाइरत
 का मान बर्ब पढ़ेबा हें जोर बर्ब का दिन्नी-माहोर में डोन के एग हें ।

इस हम्माली के काम में रुपये पीछे कहीं एक पाई मुनाफा हो गया निहान हो गये—रोजवार की चरम सीमा डीक बने।

हमारे देशों के सुविधियों के जस्ताह का अन्त इती में है कि बेध-भूया रहल-सहन खान-गान में कहीं पर किसी अन्त में हिन्दुस्तानी न मामूम हों। क्या करे? माचारी है, चमड़ा बोरा नहीं कर सकते। कोइला से फिरानियों के हीसियों का सातिमा साहब लोगों की निरट में नाम बर्न हो जाने से है। पादरी साहब के हीसिया का अन्त तब हो सकता है कि बुनिया के सब भोग नार्बपोल से सीबपोल तक ईसा को अपना मुक्ति खाता समझने लमें। हमारे बाह्यलों की तुम्मा का अन्त इसी में है कि निरप्य उन्हें लड्डू और बनेबी पेट भर खाने को मिला करे और सबेरे से साँठ तक जाप सेर चुंबनी चुंबते हुए चाँड़ के समान डकपठे हुये बैठ रहे।

“पराश्रं कुर्तव्यं लोके धरीराशि पुनः पुनः”

ऐसी बर्तन के हीसिये का अन्त तब होमा कि हिन्दुस्तानी में एक खाना भी वेहूँ का न रहे जाय सबका सब बहानों में भाद बिलायत तथा और मुम्कों में पहुँचाय दें। सैयद साहब के हीसिये का छोर तब होगा कि भीबी धरूँ कुल हिन्दुस्तान की अबासतों में अपना पंजा फैला दे और बितने ऊँचे बोहरे हैं सब उनके कीमतियों के सिये बतीर अमानत के रख दिये जाय। कुर्मिख-पीड़ित हमारे किसानों के जस्ताह का अन्त और उनके सुख की सीमा इती में है कि सरकार की बाकी न रहने पावे। पेटमर करम खाने को मिलता रहे किन्तु मेबरजब से प्रक कर रक्खा है कि ‘हम सो न होने देंगे’ जब तुब बिन-रत बाँटों पीसने की मेहनत कर खेती सैयार करोने तब हब तुम्हें कुछ दिघाय देना मारेंगे और इतना पानी बरसैवे कि रास्वध्वंस में बसर न पई और एक खाना भी तुम्हारे घर में न जाने पावे। राजा की नीयत और प्रजा के पुष्य का फल प्रजापर कर होंगे इत्यादि।

१६—डोल के भीतर पोल

अगर ही यह कहावत छोटे बालक से ८० वर्ष के बुढ़ों तक में जैसी प्रचलित है वैसी हमकी चरितार्थता भी सुस्पष्ट है। और किसी देश या भाषा में चाहे हमसे उदाहरण न मिलते हों या बहुत कम हों पर भारत ही हम समय हम कहावत का मानों उद्देश्य या लक्ष्य-सा हो रहा है जहाँ की जो एसी बात नहीं है जिसमें पोल न पाई जाती हो—अपनी महक कुमारी की बटकीसापन के बिल चमत्कृत होता है। कमी भी में समाना ही नहीं कि भीतर किसी तरह की स्थिति या पोल है पर ज्यों-ज्यों तब तक दूर पगलो सों-सों डोल के भीतर पोल निकलती जायगी। दूर न जाय हम का निम्नी-दरबार इसका बहुत ही स्पष्ट उदाहरण है। एक-एक छोट-बड़ राजा महाराजा तमस्कुकेदारों की कुमभाम बपते ही बननी की विनया आदम्बर, चमक-चमक और बाहिरी बैसब पर कदाचिन् बुबेर भी सतृचात्रे रहे होंगे। इन्द्र और वाण भी हार मान बैठें होंगे। ताई करजन महोन्न के बिल में भी यही समया होगा कि निस्सन्नेह भारत मायमी का केन्द्र-भाग है किना ही हो यहाँ का घन कभी बुझने वाला नहीं है या किसी कदर ठीक भी है। कहीं की ऐसी कामपनु पाली है जो कल्पन उर्बरा होने से कई करोड़ का जन प्रतिबर्ष उभमा करती है? वो वर्ष के निचे बिबटिया-डोजन बन्द हो जाय और यहाँ का जन यहीं खने वाले हैम का देश सोने-चाँदी में मड़ जाय। अन्तु जिस बनाबट और चमक-चमक कर बिल चकराना या उमे तने तब दूर पगलो तो यही डोल में घन। इन राजा और तमस्कुकेदारों में न जानिये किने परम्पर की स्थिति में जान बाहरी प्रविष्टा बनाये रणन को इनका मरने बिल के बाहर कर पुझने है कि भीतर ही भीतर बाँगने हुए कई कई के निचे उमरी पोल न दूर होगी। ऐसा ही हमारी कौब के सरयना अन्नर या मुनिगारों के

कपटपूर्ण कापटिक भाषणों में झोस की पोस देना मन में यही जाता है कि जो घर के अड़ानेवाले चीपटखान हैं वे किस भरोसे पर बाहर कीम के सुधारक और संशोधक तथा रिफार्मर बनने का दावा कीजते हैं। किसी प्रामाणिक लेखक ने ऐसा ही कहा भी है—

Breakers of home cannot be the makers of notions

तत्पर्य यह कि जो अपने भीतरी घात-असत में निपट सैते हैं, जिनमें जलक कुम्भित धर्म देना बिल पैदा होती है, वे इन दिनों सम्झता की नाक बन हुए देश के सुधार का बीड़ा उठए हैं। जबस्य ऐसा की कल्पना सोपान के सहारे समाज-उपशि-सैत के परमोन्नत-दिग्दर्शक पर बड़े भारत-सन्तानों को जयत् उजागर कर दिखानेकी और देश का बहु कल्याण होना की किसी वृष्टी तरह असम्भव था। घर में चुन्नी भ्रात तन्ही बाहर जागज का मोड़ा बीड़ते साखी का कारबार फैलाने हुये बड़े माउबर और प्रामाणिक सैत की या पाहुनी जयत् घर का अपहरास अपने ऊपर छोड़ मिठी पर मिठी बराबर साते हुए कुचके बसे जा रहे हैं ईश-ज्जा से एक दिन पहिया एक गर्द भूँह बाय टाट सलट बैठ रहे। कुचकीबाखी की नासिसे बगने लगी नात-असबाब कुर्क हो गया अबासत का खर्चा भी न ठप। चाहते थे कि कुचकी में का गया बन आबा ही मिले कुच तो बगुन हो पर नहीं बना या जो भेठ बोस में पोस। पढ़नेवाले कहने यह मर्यादत है, बीरों की पोस ही खोलते इसका जम्म बीजता है अपनी मोर नहीं देपता।

“असः सर्वत्र मायाणि परिच्छिन्नाणि पश्यन्ति।

असन्तो विज्वमायाणि वस्यन्ति न पश्यन्ति॥”

हा मय है पर यहाँ तो बिना बोस ही टप और से निरी पोस है तब उसे क्या तोते ? महा धारी बुनबा है। ताकनी-सकके मानी-नोठे बहु-बिटिया से घर बरत है। बाहर के सोप देपनेवाले यही कह रहे हैं मुर्छा बगु धाम्यवान् है। बीगा ही बगु बुनबा बीना ही ताहुत्र और एका बीना है—

"बाहुर लौगबा यो कह मियां जिय एक बरकल हें।
मियां की गति मिय जान सांत सैत भी सरकत हूं॥"

बुद्ध भी ऊपर से बड़ माम्बवान् प्रतिच्छिन्न और बड़े बुनबे वाले बन संसार में अपना मुँह उजागर किया है, पर भीतर की किष्किष सद्गार्ह-सगर्हों के कारण एक क्षण ऐसा नहीं जाता कि बिम्बा और छिद्र से छुटकाय पावें। मोर से उठ भापी राग भी सीमट छोड़ बुझी जान नहीं।

"सूरदास की कालो कमलो बड़ न बुझी रंग॥"

बुद्ध हजार चाहते हैं कि सब छोड़ नहीं एकाग्र में बैठ कुछ परमात्र साधन करे सब-सब बेचटा करते हैं, पर कभी इस किष्किष से जान छूट सकती है? केवल इतना ही नहीं बड़मानियों में हम भी समझे जाने हैं। इन मयों में बुर है। गाड़ी हुये पोले हुये परोते हुये सोने की छोड़ी बड़े, बाज इतनी योगनी है कम उनका ब्याह है परसों पोते का मुहन है, लड़की के लड़का हुआ रोचना भाया जमा साजना पड़ा लपनी का ब्याह भा लगा अनिहाली साजना पड़ा। तात्पर्य यह कि सब मोर की सीमट और मोष लयाट इस जीर्ण जरद्गाव का पुरज-पुरजे किय डामना है सही पर यह गार्हमयी प्रमाद-भदिरा में उमलत है। एक दिन सम्भी तान मुँह बाप रू य बर की सब छाटून और एका रू गया। बुनबे के एक-एक भावनी पम भणप बड़ बाबल की निषड़ी पकाने तीन-गर्ह हो गये। शोन न ... न देस पड़ने मयी। बुद्ध को जो कुछ प्रतिज्ञा और मायवानी की सब की पोष पुत गर्ई। हस्त में काम करत ह तोय समजत है यथा अनुक मरुबे के हृद-नयर्क हें बुन स्वाह-मुटेड क मातिक है २०० या १०० बरये महीने में कमते है। इतनी बड़े धाणम और सैत से कटनी है। यहाँ बुद्ध माह में जा शेष में पोत है पर उनका जी ही जानता है। दाउर म १० से ४ तक बुद्ध-द्वारा म हृद्यन-भरेणन, बाज राज में सर दाउर साहब की सिद्धी और चन्द्रार की दृष्ट, पर में भाव कि बरी निघोती। एरियर बाटमन करने-करते पकड़ा निघता जाता है। देचन

के दिन भी पूरे न होने पाये बीच ही में इष्टि शरम बोल गये। लोपों का देना निकला मोड़ा-साड़ी सब नीलाम ही पड़ी। डोल में पोस निकल आई। सब सोप समझते हैं पच्छिपती बड़े विद्वान् महात्मा और सच्चरित्र हैं। किसी तरह की शीश्ट बिना उठाने पर बैठे यही पुकारते हैं। यह कोई क्या जाने पच्छिपती महाशय के सच्चरित्र में निरी डोल की पोस है। बेसियों की कटार-सी भी के कटीसे कटाल से बेबाग बड़े रूना एक ओर रूना दिव्य-सैबकों का ठाक सम्हालना उनका मन अपनी मूर्खी में बिये रूना क्या कम मुहिम है? हम लोग समझते हैं, हमारी प्रताप-शामिनी न्यायरीसा बर्नमेंट के न्याय-मुक्त शासन में खेर-बकरी एक घाट पानी पीते हैं। प्रजा-नाथ क बानामास की भरपूर रूना है। किसी को किसी पर किसी तरह की जोर-जुस्म की कोई शिकामत नहीं है और वास्तव में ऐसा ही है भी किन्तु पुलिस का महकमा बर्नमेंट ने एक ऐसा कायम कर रखा है कि जिससे सब न्याय और इन्साफ की पोस खुसते देर नहीं होती। जिसके संशोधन की बड़े-बड़े कर्मचारी सब-सब फिर कर रहे हैं पुलिस कमीशन खुदा ही इसके संशोधन में प्रवृत्त हैं पर कोई कला नहीं सहती एक छोट-ना बानस्टेबिल भी चाहे तो इन्साफ की डोल में पील निकाल देने को भरपूर काशी है। हम समझत थे एडिटरी का काम बड़ी स्वच्छ-मत्ता वा है। इसमें नहीं से किसी तरह की पील नहीं है समय से पत्र निकाल चुप हो बैठे रहे।

“न ऊयो के देने व भाषो के लन।”

पर तले तरु बूब के जो देना ती बीसा इसमें डोल में पोस है बीसा पिडी बूबरे नाम में नहीं। टटके से टटके समाल विभाग से निबाल चुटीले से चुनीसा सैरा लियो कि पड़नेबाने रीश दुर्न पत्र का मूय्य भेज हैं। पत्र पहुँचा पत्र कर प्रसन्न भी हुए, किन्तु मूय्य के ठकावे का बार्ड ररियों में फँस तीन बोलने वा मूह बनाये बैठे रहे इत्यादि। विचार कर देखो तो इन मामामयी ममता के मोहजान में फँसानेवासी ईशरीय रचना वा बद्रुत

स्वल्प है जिसका कोई ऐसा बंध नहीं है जिसमें कहीं पर कुछ न कुछ पोल नहीं है फिर भी वह मायामयी रचना मय-दृष्ट्या का पथिक बनाये हम सबों को अपने जाल में फँसाये हुये है। सच है—

“ईश्वरी राम मायर्ष या स्वप्नामेव ह्यथा।
न तस्यते स्वप्नाधीश्वर्या प्रेक्ष्यमार्भव तस्यति॥”

बीर मय तो या है कि इस जाल से वे ही निकल सकते हैं जिसे नहीं अपनी दया-दृष्टि के द्वारा बाहर खींच अपना कर से नहीं ता संसार मही-वि में पीने लाठे पड़ रहो।

जनवरी, १९०३

काम से कहीं दूर बैस गया है। अचानक तार माया बाबू को जोग हो गया। कर्कशद्रु यह बात सुनते ही कर के जोग बबडा पये हाहाकार मच गया। किसी के तन में होस म रखा। उस समय मनुष्य बैठे है किसी गुस्तर बिपब पर कबोपकयन करते हुए अपना मन रमा रहे है। अकस्मात् हसो में कौजा-सा कोई कुम्भेमातरास अकिस का कोला पर बीसत पास होने से 'पठितमय्य' वहाँ पहुँच गया और ऐसे-ऐसे अरन्तुह कर्क-शद्रु सख्य अपनी बीस-बाल में कह बासा कि सोय छडिध्न हो सये रयाभास हा गया तब जोग बिभ-बित्त हो सठ पडे हुये इत्यादि बहुत-से और उदाहरण षोचने से मिल सकते है।

पुछने इतिहासों को पढ़ने से प्रकट है कि यह कर्क-शद्रु जनक सब नाचकाटी घटनाओं का कारण हुआ है। "बन्दे के अग्ने होते है ड्रीपवी वा दुर्वोचन के प्रति यही कर्क-शद्रु महामारत की बड़ हुआ। लक्ष्मण ने जब रामचन्द्र के पास घुने बत में जानकी को अकेली छोड़ जाने से इनकार किया तब जानकी ने कँसे-कँसे अरन्तुह बाक्य कहे। बन्त में उसका वँसा कुत्सित परिणाम हुआ कि राजन जानकी को शून्य बत में अनेका पाय हर के गया इत्यादि और भी अनेक उदाहरण इससे मिल सकते है।

१८—प्रकृति के अनुसार जीवन-मरण

ईश्वर ने प्रकृति के नियम ऐसे उत्तम किये हैं कि उनको सीक में यदि मनुष्य अपने जीवन की गाड़ी बंधोक चलाने देता सम्प्रेह नहीं उस इस संसार को "आधि-भ्याधि-पूरित" रहने का कदापि व्यवहार न मिले बरन् वह समय को केवल निरवधिष्ठन सुखा का अखण्ड भण्डार हो पले और बार-बार पुष्पवन्त के रास में रास मिला यही वह—

“इदं हि ब्रह्माण्डं सकलसुखनाभोपभवतम् ।”

जब ही मनुष्य पुण्य भोगने के नियम नहीं उल्लंघन हुआ किन्तु मृष्टि के विविध रूपों में उस अदृश्य बाजीगर के अद्भुत आगम्य और असम्प्य कौतूहल का अपने वादिक और मानसिक बालों नेत्रों से देखकर जो बृहत् सत्य प्राप्त होता है और वह सुख अनित्य है अपार है अनवधि है जिसका समझना ही मनुष्य के जीवन की मकदमता है उसकी प्राप्ति दुर्लभ नहीं रहती ।

परन्तु यह निश्चय रहना चाहिये कि यह सुख या स्याम में प्रकृति की सर्वोत्तम विभूति है प्रकृति ही के नियमों से प्राप्य है । इस निधि पर परीक्षण के लिए विवाय प्राकृतिक रोड के और कोई सड़क नहीं है । परन्तु मानव ज्ञानी की आवश्यकता है कि एक पाड़ी पिसल जाय सलट जाय फिर जाय और टूट कर मट भी हो जाय तो आश्चर्य नहीं ।

मान देखते हैं कि जब स पिता का बीर्य-बिन्दु माता के उदर के स्थल विषय में अविच्छिन्न होता है प्रकृति तभी से अपना वायु आरम्भ कर देती है । जो मास के निर्यत काम में उस बिन्दु को जलनी के तरीर में स अरविण गामरी की सहायता से मनुष्याकार कर अन्त को पूर्वी पर स आती है । यह संवा हा सवती है कि अभ्यास और जनन प्रसिद्धा का काम कामक को जनक बन्त और बेरनामा का हनु होता होता । पर वाग्मव में एमा नहीं है । उसे बन्त अणु-मात्र भी नहीं होता और यदि होता है तो तभी

“धीर को लक्ष्मी तपुन बतावे, प्राप कुलों से बिबावे।”

पत्रे-मिछे बड़े सोप आसी बिमान काम पड़े तो कइो ऐसा सेवकर मारें कि पहले घंटे भर बाह्र बम में किन्तु समय पर सेवकर में कही हुई बात को करके बिलाय देने में दुम बबाय कोसों दूर भागेंगे। करते बाप है पर उस भूम का बाप किस्मत हीनहार या सस्कार का देते है।

परम सुन्दरी कन्या साक्षात् देवी की मूर्ति जिसकी कीमत दस हजार से कम नहीं हो सकती। उसके योग्य लड़का भी पढ़ा-लिखा सुशील लुच मसीब सब तरह पर उपयुक्त है। पर ताड़ी बर्म न बना धारी पियस कर ही गई। या बना भी तो हाड बण्डा नहीं है सम्बन्ध नहीं हो सकता। हाड का बण्डा महा उबड़ उलीसी मुन बनता भी है, उस रूपवती सुन्दरी क साब ध्याह दिया गया। ध्याह के महीने भर बाह्र लड़का यमसोप का बटोही हो गया। अब इस समय सस्कार और किस्मत को सोप से छिद्र घुलते हैं। अपनी भूल को कभी एक बार भी न पछतावें न अपने पन्हे समाज की कुछ बोप होंगे। बित्तन ऐसे सामाजिक काम है जो केवल स्त्रियों ही से आपीन है और स्त्रियों की जैसी हीन बसा हमारे देश में है वह विरिठ ही है। ये पद्योपक सोप बाहर बाहे बित्तना जोष और अनून बिल्लामें पर के भीतर इनके उपरैष बल्लुवा की पन्ध भी नहीं पहुँचने पाती। तस्मात्, हमें तो यही जान पड़ता है कि हमारे देश में सघोषन केवल अपने में बराने के समान है। कोई बित्तना ही छिद्र घाली करे, हाना-जाना कुछ नहीं है। इर्ष्यासिये हम करते हैं हमारे देश में एक नये तरह का अनून पैदा हा गया है।

नवम्बर, १८९२

२९—लोक-रूपण

यह लोक-रूपण या लोक-रञ्जन ऐसी बसा है कि जैसे ही आप बीछें से जाते सच कहनेवाले या सच्चा बर्ताव रखनेवाले ही कुछ न कुछ बनाबट बिये बिना चल ही नहीं सकता। हाँ बिरस्त बन केवल छत्र-चूट कर मूस पाकाटार से निर्बाह कर जनसमाज में दूर रह वहीं निर्जन बन में या बसिये तो असबत्ता संभव है कि इस पृथिवी लोक-रचना या दुनिया साजी से कबाबिद् बने रह सकते हैं। किन्तु आशमियों के दण्ड में बस आपका गुण बसीनिक बोला होना—साहूनाई का बजाना और बने का बसाना है। बुद्धिमाना ने जिने गुण पारमार्थिक और तिरा बसीनिक नि-बन कर रचना है। लौकिक या लोक-रञ्जन जममें भी या पुना और यहाँ तक उस बिगाड़ आसा कि गुण परमार्थ की जमन नहीं महक भी न बच रही। बंसदेव की व्यापक दालि को माप्यांग प्रमाण है जिसके जात में बड़-बड़ बिरस्त और मुक्त भी ऐसि हुये बाट की पुनती स नाच रहे हैं। कभी को ऐसा भी होगा है—नील रत्ना जटा रखाता गितन और मुश सं देर मर बीत आसना आदि डबोसय जो अमन-बलन हम न एक-एक प्रकार है ईरबर सातुबुस हुमा ठो जीबिका और देर पालने के डार हो जाते हैं। कभी का सजितेगिरा को नहीं भी हाते—

“मौलवतधततपोऽप्ययत्नसधमध्यारयाष्टोऽपतमापय
 प्रायः परमगुरुव्यतीत्यत्रितेगिर्यामां वातामिहस्युत नबाऽऽजु
 धापव्याः
 वातामिहस्युत नबाऽऽजु
 शंभिकामाम” ॥

हम तो यही कहेंगे कि जो इस दुनियासाजी के जात में नहीं पैसा की बड़ा बानी पड़ा ठपरी संयमी धजामु बड़ा बन और जीवन मुक्त है। इसल पृटनाय पाना ही मोदीपकरी की सिद्धियां हैं। पाप

बनूनी सीबाई, बीबाना महाविनीता असम्य बेबकूफ पाउरी कहलता हुआ इस कुण्डित लोक-रञ्जना से घुटकारा रहे वह बण्डा । किन्तु साक्षात् ईश के पुनर्विचार समकर महामहोपाध्याय पद्मशास्त्री मिश्रेश्वर, योपी हीना बण्डा नहीं ।

बहुधा ऐसा भी देखा गया है कि मौकिक से अपने को छूटते न बेब लोग बीबाने सीबाई, महा मैसे और भिमीने बन गये हैं । राजा सगर के पुत्र असमंजस अपभ्रंश बलानय आदि महात्मियों की पुरातन कथाओं का वास्तविक धारार्थ इस लोक-रञ्जना से घुटकारा पाने ही का है । सब तो यों ही कि हम इस लोक-एष्या के लिये जो इतनी बेव्या करते हैं, तो इसका यही प्रयोजन है कि समाज में हमारी सुर्रखई रहे बुन की काल निवृत्ती काय कोई नाम न बरे । जो इस लोक-ज्ञान का न करत जिसने बेधर्मों का कामा पहिल लिया उस इन मौकिक से सरोकार ही न रहा । जोरत-आरत एते हो ही पाये गये एक तो वे जो तर्क-मुनिवासिष्ठ और महात्मियों में शामिल हैं इमरे विवाह-दारिये । इन विवाहियों को भी इस उन सिद्धा से कुछ कम नहीं समगत क्योंकि इरबत आरक या मोठी की-सी आब उतर जाने का त्याग जिन परलोक-एष्या का सतकष्या महस बना हुआ है विवाह के साथ ही साथ निरुम भागता है ।

इम ऊपर कह आये है मुड पारमौकिक नामों को भी साफ रञ्जना ने अपने ज्ञान में र्णमा रकषा है । आप इम समय राजा बसिन्ध महादानी बसिपुत्र के बर्ण बन पुण्यहापुण्ड का सचित धन बहाये रैत हो और "ने बड़ा उधार दानी हूँ" इन भावना से विभाव म पूसे नहीं समात पर सोचिबे ती नहीं कि मुड परमार्थ के ग्यात के किसी काम में किसी को आपन कभी एक पैसा भी दिया है? जिन्हें जारी-अरबम कहने-मुझे से दुरस्त मोटे ताबे हट्टे-बट्टे देसा उन्हें आपन भी समचना आरम्भ कर दिया । इनलिबे कि यहाँ तो यह भी लकी है कि इमे बँबे तो यह बार बने मानुमों के बीच जी ग्यातत की नाक घामे ह्य है वहाँ जाकर ग्याग नाक बनेगा । अब

बननाये शान की वह बाण कहीं नहीं कि जिसे तुम्हारा चाहना हाथ दे
उसे बायी हाथ न प्राप्त ।

अब और हमारे विषय का सीखिय । आप बड़े मैथिल और धोत्रिय
हैं निवास-मन्थ्या गया-म्यान बतिबैरवदक अग्निहोत्र सब भरपुर
निवाले हैं पर भी मैं यह सब हमनिचे हैं कि बड़े रत्न राजा महाराजा
का फेंके और हम उन्हें अपना जेता मूढ़ मूक बन मूख पुजार्थ । हम काफी
प्रयत्न कुशील अयोध्या आदि स्थानों को बार-बार समीपने हैं कि भला
हम सर्व सम्पत्ता के जमाने में बंधने को बराबरमान्य तो दिये हैं । हम का
एव विचारपुर्बत जानना चाहते ही ता प्रथम-अश्रोत्रय मातृक निवास
के पदों । अब रही भक्ति और भजा की बात तो उन दोनों की निवास
भूमि ८४ कोम ब्रह्म में का के देखिये बिल प्रसन्न हो जायगा और यही
ही जाहेगा कि हम भी ब्रह्म भूमि में क्यों न पैदा हुये कि हृष्म मपवान् की
सीता का अनुभव करन हुये अहनिा सामोर प्रभोर विद्या करन—

“बरस्परं भोग्यमहनिर्घं रतिः स्त्रीभिः सर्वं वानमतस्त सौहृदम् ।

धौमौदुलैःसापतवैतसां मुखां रीतिः परामुम्बरि सारवेदिनाम् ॥”

हमारे पडनेवाले समझते होंगे यह तो बड़ा ही आजाद भूरी मुजाने
बासा मूहपट्ट है बड़ा बल का हिन चाहतवाना है । यह कोई क्या जाने
यही देन की बार में जाके बैठ है नाच-रञ्जना तो हमारा निवास हो रहा
है । मन में यही भावना सभी है कि हमारे सिध मे साग रीमें धाएक बर्से-
दैंट गरम हो । पर विष्मत्त की कमनसीबी हिन्दी के दुस्तिन और हिन्दू
समाज की बिरता को कहीं तक नपहें २३ वर्ष बीत गये मसाने ही रहे ।
हत्तरी लोच-रञ्जना आशानिनी की । इनी स उमर्मे पिताय बाज हवने
उमी को पर दाबा । हमारे पडने बासा में मे जिन्हें हममें कुछ प्रतिबुद्ध
हुआ हा । माफ करे क्यकि हम कहें ही निग जाये हैं कि लोक में ए
लोक रञ्जना मे बच रहना अमंभव है । जम में ए माट से बिराम कहीं
का ग्याव है ।

एक क्षण भी उसे कस न पड़ती थी और सब काम बन्ध रहता था। नाम इसका पुरन का फुसू था। पत्रा-सिखा एक बखर न था। पर चालाकी से सब विषय में टांग बढ़ा देता था। या वहाँ पढ़ने-सिखने का काम ही कर लेता था।

“तुका निश्चर निकर निबासा।
यहाँ कहीं सख्तन कर बासा॥”

बुनाब को जब कुछ बुरस करना मंजूर होता था तब वह आपस की चपलबाजी बीस-बकड़ हाहा-ठीठी में विरूपक बन जाता था। ब्याभू या मोजन के समय बाबर्ची या बस्तन का काम देता था। बीसर या संजीव खेतन में सासल कंक मट्ट मही बन बैठता था। छान को हवाखोरी के बक्त कोचवाल बन जाता था। कभी-कभी तो खईसी भी दिना देता था। बिहार स्थान लिफतव में पटक बनता था। सब पुछो तो वही इसका मुख्य काम था भी। पुरन क्या मया नाम तथा गुण सब भाँति बहुमुना कर्तन था—

“साधो ऐसा नर पीर बाबरची बिहिप्रती खर।”

वहाँ तक पुरन की छिपल लिगी जाय। प्याले पर प्याला जब गरिया करन लपटा था तब आम को मबरेज करने वाला भी मही होता था। सबल जब ओर-ओर को पहुँचता था तब घस मुर्दे को पसीट टाट पर पटक देनेवाला भी मही होता था।

एक दिन अयाइ का महीना आपी रात का समय था। गुबल पस की सप्तमी या अष्टमी रही होंगी। मह बरस कर निकस गए थे बीच-बीच दो-चार बूँदें पड़ती जाती थी। पर बायल गड़मड़ा रहे थे आसमान बिलबुल छाक नहीं हो गया था जिससे बोध होता था कि अभी दो-एक बड़े जोर की बुज्जटिका और आया आहूँ है। भाप्यहीन की समृद्धि के मद्दुग अष्टमी का अग्रमा अस्त होने पर था। इधर-उधर बिलरी खत-वृष्य मेघ-माला में सौदामिनी जोषित कामिनी-श्री लीक रही थी। सब और सभाटा टाया हुआ था। बैबल नव बारि समाबम प्रपस्त मेघ

मण्डला नाक की बगल के समान सब असम-असम ठाकुर बने हुये दर
 दर करते बार्गों की बैसिया उड़ाने डालते थे। इसी समय किसी ने बाप
 बुड़ी खटखटाई। पूरन जो रिन को बाहे नहीं रहे उन को बकर उमे
 बहा रहना पड़ता था ऊँपना हुआ बापा और बिबाह खोस दिया। यह
 बादमी जो इस समय बापा लम्बे रुद का डाड़ी रखाने पा गलमुच्छे बं
 और मोत टोरी बिये था। अन्धकार मे मुमसमान मामूम होना था जाते ही
 बाबू मुसाबबम को बड़े बरब के साथ मुफ के सामन बिया। मुसाबबम
 बापो इसे परस रहे थे बस्कि इनजारी करते-करते उबठा से मये के
 बोले—बाप जी आपने तो बड़ी देर की।

देस-देस नाम क्या सह्य में हो जाते हैं। जय देर तो हूँ पर बीज भी
 ऐसी हैं कि हुनूर को यागिरगाए पमम बाबगी। माने में बहुत दिनों मे
 इस नाम को कर रहा हूँ पर एमी चिड़िया कभी मरे बापि में नहीं जाँ।
 बहुत देर तक कामा-गुस्फी और बहकड़े के उरगल दग जी बोये—
 हुनूर बाप जानते हैं एमी बीज-सी बाप है कि बिमके मिय कोपिय बगे
 और कामयाबी न हो।

मुसाब—हाँ इसमें क्या शक है। इमीमिय तो मने बापके मुतुरै
 इसे किया। बीमी बह बीम चिगिने होना चाहिये। अछा तो अब देर
 क्यों ? (पूरन से) पूरन आराम है न ?

पूरन—जी हाँ बापका हुबम पाठ ही मने सब साथ रसना। मसाब
 -बाबाम ! अछा तो इसका शागिरगाए इनाम पायेगा।
 मपुप जो बुबबाप मोन माधे यह सब सीमा देगना रहा बित्त में
 बहुत ही मिलाया और बटने लगा—मं बहाँ एते ठीर आ छेना अब बीम
 छुटकाय पाऊँ।

“अपमानक समय बलिहा लप्रियात।”

मसाब के बौतुर-बग मपु के पाठ बी सामगा मे मं निबना था और

हार होपी इस मय से प्रतिवासी का जो तत्त्व और मर्म है उसे न स्वीकार कर अपने ही कहने को पुष्ट करता जाता है और प्रतिवासी की बात काटता जाता है। हम कहते हैं इससे लाभ क्या ? प्रतिवासी जो कहता है उसे क्यों न मान लें उसका जो बुझाने से उपकार क्या—

“अस्य न किञ्चित् प्रयोजना समाप्तिः।”

चिदान्त —

‘मुष्ण-मुष्णे नतिभिन्ना तुष्णे-तुष्णे सरस्वती।’

बहुत लोग इस चिदान्त को न मान जो हम समझे बैठे हैं उसे क्यों न दूसरे को समझावे इसलिये न जानिये किटना तर्क-कुतर्क सुफकार करते हुये भाय-बाय बका करते हैं। फल अन्त में इसका यही होता है कि जो किशनों का बुझी होता है। मानता उसके कहने को नहीं है जिसे उसके कथन में यत्ना है। हमारे चित्त में ऐसा जाता है कि जो हमने तत्त्व समझ रक्खा है उसे उसी से कहें जिसे हमारी बात पर श्रद्धा हो। मोगी की सरियों को कुत्ते के गले में पहिना देने से फायदा क्या ? अस्तु, हमारे प्राचीन आर्यों ने जो बहुत-सी विद्या और ज्ञान छिपाया है उसका यही प्रयोजन है। जिसे इन दिनों के लोग ब्राह्मण पर बीपारोपण करते हैं कि ब्राह्मणों ने विद्या को छिपाया सबों को न पढ़ने दिया।

विद्या ब्राह्मणमेत्याहु श्रेयस्विस्तेभवाप्यहम्।

अतुपकाय मां यावास्तावा स्यां बीर्ववत्तमा॥

विद्या ब्राह्मण से जो कहती है—मैं तुम्हारा लजामा हूँ मुझे जुगै के रक्तो गिन्यक तथा गुण में श्रेय निकालनेवाले मत्सरी को मत्त बतसाजो ऐसा करोगे तो मैं तुम-सी अत्यन्त बीर्ववती हूँगी। छात्रोप्य ब्राह्मण में जो ऐसा ही कहा है—

विद्याह बी ब्राह्मणमाजगाम तबह्मत्सि त्वं मां पालय।

अनर्हति जानिने नैवमाहा मोपाय माप्येयती तबह्मत्सि

विद्या तार्ह प्रियेठ न विद्यामूर्धरे कयेत्॥

चित्तने सोन देके हैं जिनके मधुर कोमल धर्मों में मनीं कूल शरीर हों। श्रुति-मनोहर उनके बरनाम्बनिश्रुत परावर्तियों के एक-एक छम्ब पर भी लुमाटा है। किन्तु चित्तने कटुकायी लस ऐसा बदस्तुर बोलनेवाले है कि वे जब तक दिन में दो-चार बार मर्मदाइन कर चित्ती का चित्त न हुआ तो तक तक उन्हें खाना मही हजम होता। ऐसे दुष्टों का जन्म ही इत-तिये संसार में है कि वे अपने बाम्-बच्छ से दूसरों का हृदय विहीन किया करें।

“प्राचीन रीया बटका न बाबो नरस्य चित्तु नरकापातानाम्।”

बाणसंयम इमीनिये कहा गया है कि जही एता न हो कि कोई छम्ब हमारे मूल से ऐसा निकस जाय कि उगस हमारे के चित्त को भेद पहुँचे। घीम के सागर चित्तन पुरप रज बादरत-से बादरतिज एस है जो अपना बहुत-सा मुबछान सह लेते हैं पर सेन-सेन में कड़ाई के साथ मती पेदा आया चारते और न वे दूसरे का भी दुगाने हैं। निम्बक ऐसे लाग बड़ापुरय है स्वर्णभूमि से आये है और स्वर्ण में आवेंगे। जो परचित्तानुरंजन में सीलीम है उनके ममता अनुप्य कोटि में ऐसे जही कोई होंग। नर यह उम्दानुवर्तन बीबी बुध नहीं मन्वजाग पाता है जही स्व-बाट-उपर की उम्पा का जनाव है। अठकारी को जभी यह बुद्धि होती ही नहीं कि हम चित्ती के चित्त को न दुषावे नर परछिडाम्बपग ही में उसे मूल तिलता है। हमारे की ऐब-बोई को वह अपने जिये तिल-बटमाव मानता है। अमिमान से देवदूत और करिगते भी स्वर्ण से भुग्न जिये पये। तब त्रिममें यह लीलायी समलन है उसकी तुलना परचित्तानुरंजन के गाथ नयोकर हो लवटी है। यह स्व-दाट उबर घनबाजा को बहुपायन के साथ लबार रहता है। हमारा यह लीग जम्ही के मिय बिगाप रमाजन है। निजिजन जो सामाज अनुप्य के सामन भी मिड़मिड़या करता है उसको इन रताजन की क्या अरेता है।

बहुत से ऐसे भी सीम हैं जिनकी जान और बड़ कुछ ऐसा होता है कि उसे देख चित्त में विवाद और दुहन पैदा होती है।

हार होगी इस धम से प्रतिवादी का जो उत्तर और मर्म है उसे न स्वीकार कर अपने ही कहने को पुष्ट करता जाता है और प्रतिपक्षी को बात काटता जाता है। हम कहते हैं इससे नाम क्या? प्रतिवादी जो कहता है उसे क्यों न नाम में उसका जो बुझाने से उपकार क्या—

“अज्ञं न किञ्चित् समुद्रा समाप्ति।”

सिद्धान्त है—

“मुण्डे-मुण्डे यतिनिष्ठा मुण्डे-मुण्डे वरस्वती।”

बहुत लोग इस सिद्धान्त को न मान जो हम समझे बैठे हैं उसे क्यों न दूसरे को समझावें इसलिये न आनिये कितना ठर्क-मुठक शूण्यवाद करते हुये बीच बीच बफा करते हैं। फल मूल में इसका यही होता है कि जो किठनों का बुझा होता है। मानता उसके कहने को नहीं है बिते उसके कवन में मझा है। हमारे बिल में ऐसा जाता है कि जो हमने ठरक समय रमजा है उसे उछी से कई बिते इफारी काठ पर पझा ही। भोली की करिषों की मुण्डे के गले में पहिना देने से कायबा क्या? यस्तु, हमारे प्राचीन आर्यों ने जो बहुत-सी बिद्या और ज्ञान सिपाया है उसका यही प्रयोजन है। जिस इन दिनों के लोग ब्राह्मण पर दोषारोपण करते हैं कि ब्राह्मणों ने बिद्या को छिपाया सबों को न पढ़ने दिया।

बिद्या ब्राह्मणमेत्याहु सेवचित्सेनवाप्यहम्।

अतुमकाय ना माहास्तावा स्या बीर्यवत्तमा॥

बिद्या ब्राह्मण से यों कहती है—मैं तुम्हाय लजाना हूँ मुझे पुरी के रस्तो निन्दक तथा मृग में शेष निवासनेवाले मत्सरी को मत बघमाओ ऐसा करोने ली मैं तुम-सी अत्यन्त बीर्यवती हूँगी। छान्दीय्य ब्राह्मण में भी ऐसा ही कहा है—

बिद्या ये ब्रह्मणमात्रवान् तवष्टमिन् त्वं ना कात्म्य।

अनर्हति मन्त्रिन् मैत्रवादा बोपाय मांयेयती तवाह्वयतिम्

बिद्या ब्राह्मं विवेत न बिद्यामृपरे अयेत्॥

चित्तमें लोग ऐसे हैं जिनके मयूर कोमल शब्दों में मालों फूल झरते हैं। अति-मनोहर उनके बहनाम्ननिःसृत परावर्तियों के एक-एक शब्द पर भी सुमाठा है। किन्तु कितने कटुबादी व्यस ऐसा अशुभ बोतनेवाले हैं कि वे अब तक दिन में दो बार बार मर्मताड़न कर किसी का चित्त न हुआ में तक तक उन्हें खाना नहीं हजम होता। ऐसे कुप्यों का काम ही इत-मित्ये मसार में है कि वे अपने वाग्-व्य से दूसरों का हृदय विदीर्ण किया करें।

“घृतीव रौत्या कटुका च बाभो मरस्य चिह्ना मरकागतात्ताम्।”

बाबसंयम इतीमित्ये बह्ना मया है कि कही ऐसा न हो कि कोई शब्द हमारे मुख से ऐसा निरस बाय कि उससे दूसरे के चित्त को लव पड़ने। घीम के सापर चित्तन पुरप रत्न चारवत्त-से चारचरित्र ऐसे हैं जो अपना कटु-मा मुखसान सह लेते हैं पर लेन-लेन में कड़ाई के साथ महीं वेरा जामा चाहते और न वे दूसरे का भी दुलाते हैं। निरचय एसे लोम महापुरष है स्वर्गभूमि से जाये है और स्वर्ग में जायेंगे। जो परचित्तानुरंजन में लीलाग है उनके समरा मनुष्य कोटि में एसे नहीं कोर् होने। पर यह उन्दानुवर्तन बीबी पुष बड़ी अवकाश पाता है जहाँ दर्प-बाह-उबर की कृपा का अभाव है। कटुकारी को कभी यह बुद्धि होती ही नहीं कि हम किसी के चित्त को न दुयावें बल् परछिद्रान्नेवम ही में उसे मुख मिसना है। दूसरे की एबजोर्द को वह अपने मिये तिस-बहनाव मानता है। अभिमान में बैकट्ट और परिरने भी स्वर्ग में ध्युन चिये पये। तक जिनमें यह रीतानी धनमत है उसकी मुलना परचित्तानुरंजन के साथ सर्वोपर हो सक्ती है। यह दर्प-बाह-उबर धनवाना को बहुतायत क साथ तबार रहता है। हमारा यह सिरा उन्ही के मिय विरोध रसांजन है। निव्विचन जो सामान्य मनुष्य के सामन भी मिङ्गिङ्गाया करता है समको इस रसांजन की क्या अपेसा है।

कटु से एसे भी लोम है जिनकी चाल और बह्ना कुछ ऐसा होता है कि उसे देख चित्त में विचार और मुङ्गन पैदा होती है।

३२—खटका

पहले तो पढ़नेवाले ही इस खटका का नाम सुन अपने जी में खटका करने कि यह क्या खटके की बात सुना रहा है। पाठक ! यह बात ऐसी ही है। ब्रह्मा की सृष्टि में कोई समुप्य एक पल के लिये भी इस खटके-सटके से खाती नहीं रहता। जबक माया नहीं हुई है। जाने को उठ माया का भोक-बिलास करने वाला कोई नहीं है। बहुत-सा टाटका टन-मम मंत्र-मंत्र के बाहर बरबाली के कुछ आत्म प्रगल्भ हुआ भी तो बर्नसाव का खटका लगा रहता है। बरखी पर जाये ईश्वर ने बड़ी कृपा की पत्थर पर डूब जमी तो बिल उठ एक ब एक बीमारी का खटका लगा रहता है और बड़े हुये तो अपने छात्रियों में खेतते हुये हारने-जीतने का खटका रहता है। स्कूल में मास्टर साहब लालाद् यमराज के अवतार, घर में बाप-माँ की बुढ़की और भिड़की का खटका। बरसबे दिन परीक्षा और दरजा बढ़ाने जाने का खटका। कुछ बात नहीं है बिना इम्तहान बिग बनता नहीं। कम हुये तो अपने छात्रियों में बात नीची होती है, ताल बर तक बिलाल के छात्र लिपटे रहे हिस्टरी याद है तो मैथमेटिक्स का खटका है। इयानेबाजी और अपने पानबाले से पूछ-पूछ लिलते तो वहाँ इम्तहान के कमरे में पाई सोपों की सल मिजाजी का खटका है। और, मिठी तरह इम्तहान दे-देबाय प्यारिग हुये तो अब ही एक नम्बर कम रहने का खटका रहा। मुकतहिन साहब का मिजाज दुस्म रहने को रोज बेवता-पितर मनाया करते है और बड़े हुये-बबाली का बीघ सवार हुआ छीर की एक-एक रग फड़क रही है ऐसे समय सबसे त्रियादह सटका बीज का रहना है जिसका किती और लब याना बटन ही बटन है। बण्डा मिठी ने कहा है—

“भावा इइक लपेट में लगी बन्म बपेट।
 बोही भावा बलक में छीर तरबा पेट॥”

नजर ऐसी बुरी बसा है कि सी में निदानसे इसके रोगी होंगे। सैर-बाँध के रोग से बचे तो अब बीभिका की चिन्ता सवार हुई। सार्टिक्रिफेट से सब ओर घूम जाये वंखा कुम्भी तक की जयह न मिली। हमार-हमार मुस्किनों से कहीं कोई जयह मिली भी तो डाक्टर साहब से हेल्थ सार्टिक्रिफेट का घटका। क्या जाने डाक्टर साहब की पनचक्कर अक्रिम में उस समय क्या सवार हो जाय। परदेस में लौकरी हुई तो परनाभो की सही ससामती का घटका। घर पर हुये तो काम की बियावती से एक्टिव न पड़ा रह जाने का घटका। प्रविष्टा और पञ्चि बनाये रहने का घटका। ईस्वर सामुक्ल हुये और सब निमता गया तो बदनी का घटका रहा। हाक्रिम बासा से कुष्टों की सिफायत का घटका। तषकीफ में आ जाने का घटका। गुड सतपिष का घटका। स्वाती की बुर-ता वेतनन का दिन तक रहे हैं १ वर्ष बाकी है, अब ५ ही रहे अब केबस छठी महीने रहे अन्तोयत्वा जाये या ठिहाई पर वेतनन हुई। ऐसे बूढे बीस को कीन बाँध कर भूता दे? बहु सरनार ही ना पर है कि ऐगों का भी बेड़ा पार होगा जागा है। निदान वेतनन हुई तो पर में बैठे-बैठे मन नहीं लपटा बाध-बाध की रियासतों में टटोलन लगे। ठेली के बीस को घूमने से काम। इत्तर लड़के पङ्-तिनकर रियार हुये उन्हें किसी नाम में लया देने का घटका सवार हुआ। उनको कीकरी मिलने के लिये बँपने-बँपने किन्ही कारसार करते छिरे। प्रारम्भ और बचीसा अन्धा हुआ तो उन्हें भी बही लौकरी मिल गई। अस्तु, लौकरी पेयेबालों का घटका तो सटक गया। अब उनको तिराजे हैं जो रोजगार की तरफ मुँह हूय है।

उत्तर आदमी की मुँही बूच और अनेक छट्ट की बईमानी कर अशुभ्य पन इबदटा किया तो सही घर दिवाना पिटन का घटका न गया एतिया कम निवसी है नाम चमता जागा है राउो दिन दिमाबतों की चिदिद्वी तिपठे-तिपठे नमर मुच गई, बाँध शम्भ हो गई, पर तो भी मुँही मूनपन में पायराटी न आई। हिरवेगार हररम मुँही बूचने को मुम्बई रहते हैं आई को लीपा-गादा पनबराध बाय बाउा में निपैदे रहे तो भी बना न

पहले तो पढ़नेवाले ही इस खटके का नाम सुन अपने जी में खटका करेंगे कि यह क्या खटके की बात सुना रहा है। पाठक ! यह बात ऐसी ही है। ब्रह्मा की सृष्टि में कोई मनुष्य एक पल के लिये भी इस खटके-सटके से बचती नहीं रहता। जबकि माया भरी हुई है। माये को उस माया का भोग-विनाश करने वाला कोई नहीं है। बहुत-सा टोटका टल-मन मंत्र-मन्त्र के बाहर बरबाती के कुछ आगम प्रवट हुआ भी तो गर्भशास्त्र का खटका समा रहता है। मरती पर माये ईश्वर ने बड़ी कृपा की पत्थर पर डूब जमी तो तित जठ एक न एक बीमारी का खटका समा रहता है और बड़े हुये तो अपने छात्रियों में चलते हुये हारने-जीतने का खटका रहता है। स्कूल में मास्टर साहब साक्षात् यमराज के अवतार, पर में बाप-माँ की बुढ़की और सिढ़की का खटका। बरसबैं दिन परीक्षा और बरजा बड़ावे जाने का खटका। कुछ पाठ नहीं है बिना इम्तहान किये बनता नहीं। फेल हुये तो अपने छात्रियों में जाँच लीची होती है, साल भर तक विचार के साथ निपटें रहे हिस्टरी याद है तो मैथेमेटिक्स का खटका है। इधारेबाजी और अपने पामबाने से पूछ-पूछ लिखते तो बड़ी इम्तहान के बमने में गार्ड लोपों की सख्त जिवाजी का खटका है। और, किसी तरह इम्तहान है—देबाय फरिण हुये तो जब दो एक नम्बर कम रहने का खटका रहा। मुमठरिन साहब का मित्रान दुस्स्त रहने को रोज बैबना-पितर मनाया करते हैं और बड़े हुये बबानी का बोरा सबार हुआ छरीर की एक-एक रग फड़क रही है। उसे समय सबसे जिवायह खटका भाँस ना रहना है। तिसका फिती बार लभ आता बहुत ही लहन है। बच्छा निर्मा ने कहा है—

“घाया इरक लपेट में लामी बडम खपेट।

बोही घाया खलक में घीर जामा पेट ॥”

गजर ऐसी बुरी बना है कि सी में निम्नानवे इसके रोपी होंगे । सीट, बोल के रोम से बचे तो अब जीविका की चिन्ता सवार हुई । सार्टिफिकेट से सब ओर भूम आये तथा कुम्भी तक की जयह न मिली । ह्जार-ह्जार मुदिफनों से बही कोई जयह मिली भी तो डाक्टर साहब से हेल्थ सार्टिफिकेट का घटका । क्या जाने डाक्टर साहब की धनबन्धर बकिम में उस समय क्या सवार हो आन । बरदेय में नौकरी हुई तो घरवालों की तही सनामती पर घटका । पर पर हुये तो काम की त्रिमासकी से एरिपर न पड़ा रहे बाले का घटका । प्रतिप्या और पडपि बनाने रहने का घटका । ईश्वर सामुक्ल हुवे और सब निभता गया तो बरनी का घटका रहा । हाकिम बाला से पुष्टी की तिबायत का घटका । तखकीक में आ बाले का घटका । मुद सरबिस का घटका । स्वात्री की बुद-सा पेनसन का विन ठाक रहे हे ६ वर्ष बाकी है अब ५ ही रहे अब केवल छद्दी महीने रहे, अन्ततोगत्वा बाबे या तिहार पर पेनसन हुई । एषु बूदे बेल को बोल बांध कर नुसा हे ? यह खरमार ही वा बर है कि एलों वा भी बेदर पार होना जाता है । निगत पेनसन हुई तो बर में बीठे-बीठे मन नहीं लयता आस-नाम की रिपासतों में टटोलने लगे । तेनी के बेल को भूमने से बाब । इबर लड़के पङ्क-तिलकर तैपार हुये उन्हें जिगी बाब में लया देने का घटका सवार हुआ । उनको नौसरी बिलने के लिये बेंदम-बेंदले किरवी साकमार करत छिरे । प्रारम्भ और बसीला बखर हुआ तो उन्हें भी बही नौकरी मिल गई । अस्तु, नौकरी पेचेवालीं का घटका तो घटक गया । अब उनको निघडे है बी साकमार की तरह मुक हुये है ।

इतर बापनी की मूँही बूब और बनेक तरह की बर्दमानी कर असंभ्य पन इबदटा किया तो सही पर निबाला निटन का घटका न गया बहिया बल निबली है बाब चलता जाता है रातो दिन रिपासतों की बिदित्या निघडे-निघडे बमर मुक गई, बाय मन्त्र ही गई, पर तो भी पूँजी मूलपन में पायगरी न आई । हिसेवार हरदम मूँही बूबने को मुर्नद रहते है आई को सीबा-सादा बबबसाध पाप बातों में रिपौहे रहे तो भी यता न

झूटा । मतीजें ऐसे बट्टर और निर्दयी जनमें कि पाबें तो चाचा साहब का हाड़-मांस तक खाया जायें । चाचा को भी इन मतीजों का हरबन्ध बढना बना ही रहता है । पाबें तो उन्हें निर्मूल कर डालें ।

फिस्तनों को के सी० एस० आई० रायबहादुर बनन का खटका रहता है । कौशिल की मैम्बरी के लिये दिसोजान से कोषिष कर रहे हैं । कलकट्ट, कमिरनर आदि हाकिमों की कुसामर करते-करते उनके बँपनों की नीलट पर माया और नाक रगड़ते-रगड़ते नाक बिस गई, पर बर काम पड़ा तो जनका निरा बंध और स्वार्थपच्छा रैक लोगों ने उन्हें न चुना । हमीं चुने जायें इसलिये बहुत हटपटाने पर बन्ध को सब ओर से माहूम और निराप ही अपना-सा मुँह लिये बैठ रहे । पुवा खेतने गये बड़ा भापी दाँव लगा दिया, यहाँ तक कि एक ही दाँव में या तो इस हजार आते हैं या कौड़ी के तीन-तीन होते हैं दाँव का खटका लग रहा है पी माने या छक्का । इसी तरह रोब मारियों को चुट्टी और टैकस का खटका । संपादकों को राजबिच्छ लेक का खटका । मवर्नमेंट को शासन प्रणामी में उमरा से उमरा राम देते रहे सरकार का राज्य अटस होने के लिये अपने सिख हाप प्रजा में राजबक्ति स्थापित करने की उदा केप्टा करते रहे इनका कोई बन्धवार या इनाम नहीं । कर्मचारियों के निश्चित काम और अत्याचार से खिन्न हो जोस में जाय कभी कोई बात किसी संपादक ने लिख डाली । बस उसके पी की जा मपी मुकबमा कायम हो गया ईतर ही उसका सहायक हो तो छटकाप हो इत्यादि ।

संसार के मावत् मनुष्य एक खज भी तरबुद से पामी नहीं । बिन-रात के खटके के खटके में बड़े भटके हुये हैं जिससे शान्ति की विला से बबकाप ही नहीं मिलता । बटमोड़ी में एक चाबस टयोसने की मांति पोड़े से उदाहरण खटकों के यहाँ दिलायाये गये । बजी जीते जी तो खटके से कोई खामी रहता ही नहीं मरने पर भी जग लेने का खटका लगा रहता है । बर्माभर्म ताब से यमराज के पाहुने हुये अपने फिये हुये पाप या पुष्य के अनुसार स्वर्ग-नृष या नारकी पातना भोग फिर जगमे, फिर मरे इस तरह पर जगम-मरब

की इस बग़ादि-बाप में पड़ सबसागर की बचस और तरल तरङ्गों में बोठा
 धाते हुए ऐसे ही कोई धाम्यवान् मुहठी होमें जो परमात्मा के निर्वाण पद के
 अधिकारी हो सब के लिये सटका से मुक्त हो जगत् है ।

मई १८९६